अक्कितम अच्युतन नम्बूदिरी

संपर्क :- देवायनम्
पोस्ट - कुमारनल्लूर जिला-पलक्कड (केरला)
पिन - 6795552
मो.98464-59448

18 मार्च,1926 को केरल के पालक्काड जिले के कुमरनल्लूर में जन्म। पिता का नाम अक्कितम वासुदेवन नम्बूदिरी। माता - चेक्कूर पार्वती अन्तर्जनम। प्रारम्भिक गुरु थे मावरे अच्युतवारियर। 8 से 12 वर्ष की आयु तक पिता व अन्य लोगों से ऋग्वेद, बाद में कोडक्काट्ट शंकुण्णी नम्बीशन से संस्कृत व ज्योतिष, 14 वर्ष की आयु में तृक्कडियूर कलत्तिल उण्णीकृष्ण मेनन से अंग्रेजी, गणित आदि की शिक्षा ली। वी.टी. भट्टतिरिप्पाड से तमिल भी पढ़ी। कुमरनल्लूर गवर्मेंट हाईस्कूल की शिक्षा पूरी करके कालीकट के सामूदिरी कॉलेज में इंटरमीडिएट में प्रवेश तो लिया, किन्तु पढ़ाई आगे न बढ़सकी। बचपन से ही चित्रकला व संगीत में अत्यधिक रुचि रही है।

आठ वर्ष की आयु से ही कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया। इडश्शेरी, बालमणियम्मा, नालप्पाडन, कुट्टिकृष्ण मारार,वी.टी. एम.आर.बी. आदि के निरन्तर सान्निध्य व मार्गदर्शन ने अक्कितम के कवि व्यक्तित्व का विकास किया।

1946 से 1949 तक वे 'उण्णीनम्बूदिरी' मासिक पत्रिका के प्रकाशक रहे। 'योगक्षेमम' साप्ताहिक तथा 'मंगलोदयम' मासिक पत्रिका के उप-सम्पादक भी रहे। जून 1956 से अप्रैल 1985तक आकाशवाणी के कालीकट तथा त्रिश्शूर केन्द्रों पर कार्यरत रहे तथा 1985 में सम्पादक के पद से सेवानिवृत्त हुए। अन्य प्रमुख भूमिकाएँ निम्नवत् रही हैं-

निदेशक - साहित्य प्रवर्तक सहकारी संघ, कोट्टयम (1973-1976) * उपाध्यक्ष - केरल साहित्य अकादमी (1974-1977)

उपाध्यक्ष - संस्कृत भारती, आगरा (1986-1996) * अध्यक्ष - वल्लत्तोल एजूकेशनल ट्रस्ट शुकपुरम (1989 से) अध्यक्ष - इडश्शेरी स्मारक समिति, पोन्नानी (1985 से) * उपाध्यक्ष - चङ् ङ म्पुषा स्मारक समिति कोचीन (1986-1996) * अध्यक्ष - वेदिका ट्रस्ट (सामवेद अध्ययन केन्द्र, पांज्याल (1995 से) * अध्यक्ष - विल्वमंगलम स्मारक ट्रस्ट, तवनूर (2000 से) योगक्षेम सभा, त्रिश्शूर के सदस्य के रूप में नम्बूदिरी समाज के सुधार के लिए सतत् प्रयत्नशील रहे हैं। इस बारे में उन पर महात्मा गाँधी के नेतृत्व में चल रहे सशक्त राष्ट्रीय आन्दोलन का काफी प्रभाव पड़ा था। 1946 से 1949तक अक्कितम योगक्षेम सभा के प्रमुख नेता रहे। वी.टी. भट्टतिरिप्पाड, ई.एम.एस. नम्बूदिरीप्पाड, ओ.एम.सी. आदि के निजी सचिव रहे। 1950 से 1952 तक पोन्नानी केन्द्र कला समिति के सचिव तथा 1953 से 1954 तक अध्यक्ष भी रहे। इडश्शेरी, वी.टी., नालप्पाडन, वी.एम. नायर, बालमणियम्मा, एन.वी. कृष्ण वारियर, सी.जे. थामस, एम. गोविन्दन, चिरक्कल, टी. बालकृष्णन नायर, एस.के. पोट्टेक्काट्ट आदि का इस कला समिति से गहरा सम्बन्ध था। पोन्नानी केन्द्र कला समिति ही कालान्तर में केरल के नाटक-जगत् के विकास में मुख्य भूमिका निभाने वाली मलबार केन्द्र कला समिति के रूप में विकसित हुई।

अक्कितम ने त्रिश्शूर, तिरुन्नावाय, कडवल्लूर आदि स्थानों के सुप्रसिद्ध वेदाध्ययन केन्द्रों से जुड़कर वेद-विद्या के प्रचार का प्रयत्न किया। 1974से 1978 के बीच पांज्याल, त्रिवेन्द्रम व कुंडूर में आयोजित यज्ञों की सफलता के लिए उन्होंने कठिन प्रयत्न किये।

अक्कितम ने वैदिक परम्परा के उदात्त सिद्धान्त को अन्तर्निहित करके रूढ़िवादिता विरोधी आधुनिक दृष्टिकोण को समाविष्ट कर गैर ब्राह्मणों के बीच भी वेद-विज्ञान के प्रचार के लिए भरपूर आवाज उठायी। आखिरकार इसमें उन्हें सफलता भी मिली। उनके शान्त व गम्भीर उनके व्यक्तित्व के तेज के समक्ष यथास्थितिवाद जैसे भाप बनकर उड़ गया तथा वेदाध्ययन के बारे में उनके उदार व व्यापक दृष्टिकोण का सब जगह समादर हुआ। मनुष्य को मनुष्य से दूर करने वाला यथास्थितिवाद अक्कितम से निरन्तर भयभीत रहा है। अक्कितम ने अस्पर्श्यता के विरुद्ध 1947 में हुए पालियम सत्याग्रह में भी भाग लिया।

मलयालम कविता में आधुनिकता का प्रवेश अक्कितम की 1952 में प्रकाशित 'इरूपदाम नूट्टांडिंडे इतिहासम्' (बीसवीं सदी का इतिहास) नामक खंड-काव्य से ही हुआ। आलोचकों ने इसे टी.एस. इलियट की 'वेस्ट लैंड' के समतुल्य स्थान दिया। उस समय से लेकर आज तक सम्पूर्ण केरल में यह काव्य-कृति प्रगाढ़आस्वादन व तीखे विमर्श का विषय बनी रही है। आज 68 वर्ष बाद भी आलोचकों के बीच इस कविता की चर्चा अवश्य होती है। मानवीय प्रेम पर आधारित सामाजिक जीवन-दर्शन के उदात्त भावों को इसमें सरल व अगाध इतिहास के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। प्रेम से विहीन होने तथा इसी वजह से अनैतिक बन जाने वाली क्रान्ति कभी विजयी नहीं होती, इस दूरदर्शिता को पहली बार प्रतिपादित करने वाली कृति थी यह। समानान्तर विचारों को प्रतिपादित करने वाली 'द गाड दैट फेल्ड', 'डॉ. जिवागो', 'मिड डे डार्कनेस' जैसी विदेशी भाषाओं की कृतियाँ 1950 के दशक में व 1960 के दशक के प्रारम्भ में भारत आयीं। अक्कितम की 'इतिहासम' इसके पहले ही 1951 में रची गयी तथा 30 अगस्त 1952को 'मातृभूमि' साप्ताहिक पत्रिका में छपी।

कविता, नाटक, अनुवाद, लघुकथा, उपन्यास आदि विभिन्न विधाओं में अक्कितम की 46कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। 1978 से 1982 के बीच भारत सरकार की सीनियर फेलोशिप के अन्तर्गत अक्कितम ने महात्मा गाँधी के जीवन व उनके लेखन के बारे में शोधकार्य करके 'धर्मसूर्यन' (1999) नाम खंड-काव्य लिखा। श्रीमद्भागवत का मलयालम अनुवाद (2002) अक्कितम की चिरन्तर काव्य-साधना का फल है। उनकी अन्य काव्य कृतियाँ हैं- 'वीरवादम', 'वलक्किलुक्कम', 'मनःसाक्षीयुडे पूक्कल', 'मधुविधु', 'मधुविधुविन्नशेषम', 'अंचु नाडोडिपाट्टुकल', 'करतलामलकम', 'अरङ ङे ट्टम', 'मनोरथम', 'अनश्वरंडे गानम', 'इडिञ्ञुपोलिञ्ञा लोकम', 'वेण्णक्कल्लिंडे कथा', 'संचारिकल', 'कडम्बिंपूक्कल', 'ओरू कुडन्ना निलाव', 'मानसपूजा', 'निमिषक्षेत्रम', 'अमृतघटिका', 'आलञ्ञट्टम्मा', 'स्पर्शमणिकल', 'कलिक्कोट्टिलिल', 'ओरूकुला मुन्तिरिङ ', 'उण्णीकिनावुकल', 'समन्वयत्तियंडे आकाशम्', 'पंचवर्णकिलिकल', 'श्लोकपुण्यम', 'अक्कितत्तिंडे कुट्टिकविताकल', 'अन्तिमहाकालम' (सभी काव्य-संग्रह), 'इरूपदाम नूट्टाण्डिं डे इतिहासम', 'बलिदर्शनम', 'कुदिर्नामण्ण', 'देशसेविका', 'धर्मसूर्यन' (सभी खंडकाव्य), 'ई येडत्री नोणे परयू' (नाटक),'अवतालङ् ङ् ल', 'काक्कपुल्लिकल' (दोनों लघु कथा संग्रह), 'उपनयम', 'समावर्तनम', 'हृदयत्तिलेक्कु नोक्कि एषुदू', 'पोन्नानिक्कलरी', 'श्रौतशास्त्रपारम्पर्यम केरलत्तिल', 'संचारिभावम' (लेख संग्रह), 'सागर संगीतम' (कविता-अनुवाद), 'सनातनधर्मम तन्ने देशीयता' (श्री अरविन्द के भाषण का अनुवाद), 'नाडोडी', 'तेलुंगुकथकल' (अनुवाद), 'श्रीमहाभागवतम' (कविता अनुवाद)।

अक्कितम को मिले विभिन्न पुरस्कारों में केरल साहित्य अकादमी सम्मान (1972), केन्द्र साहित्य अकादमी (1973), ओडक्कुडषल सम्मान (1973), राइटर्स कोऑपरेटिव सोसायटी सम्मान (1975), उल्लूर सम्मान (1994), आशान पुरस्कार (1994), ललिताम्बिका अन्तर्जनम सम्मान(1996), वल्लत्तोल सम्मान (1996), कृष्णगीति पुरस्कार (1997), सम्पूर्ण साहित्य योगदान के लिए केरल साहित्य अकादमी सम्मान (1998), बालगोकुलम कृष्णाटमी सम्मान (2000), देवी प्रसादम सम्मान (2001), संजयन पुरस्कार (2003), पद्मप्रभा पुरस्कार (2003), नारायण पिषारड़ी पुरस्कार (2004), अमृतकीर्ति पुरस्कार (2004), अबुधाबी मलयाला समाज पुरस्कार (2006), पन्तलम पुरस्कार(2006), पूतानम पुरस्कार (2006), केरल सरकार का एषुत्तच्छन पुरस्कार (2008), ज्ञानपीठ पुरस्कार (2019) आदि सम्मिलित है।

अक्कितम ने यू.एस.ए. कनाडा, यू.के., फ्रांस आदि अनेक देशों में साहित्य कार्यक्रमों में हिस्सा लिया है। फ्रेंच रेडियो द्वारा भी उनका साक्षात्कार प्रस्तुत किया गया। उनकी अनेक कविताओं का अनुवाद फ्रेंच भाषा की पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुका है। यह अनुवाद जाक जुवे, डामिनिक बुसे, गीता कृष्णमूर्ति आदि के द्वारा किये गये हैं। 'इरूपदाम नूट्टाण्डिंडे इतिहासम' का ई.एम.जे. वेण्णियूर ने अंग्रेजी, गोपाल जैन ने हिन्दी तथा एल.आर. स्वामी ने तेलुगु में अनुवाद प्रकाशित किया है।

वर्ष 1949 में 23 वर्ष की आयु में अक्कितम का विवाह हुआ। पत्नी का नाम है श्रीदेवी अन्तर्जनम। पार्वती, इन्दिरा, वासुदेवन, श्रीजा, लीला व नारायणन आदि उनके 6 पुत्र-पुत्रियाँ हैं। वर्तमान में वे सपरिवार केरल के पालक्काड जिले के कुमरनल्लूर गाँव में रहते हैं। स

परिचय-उमेशसिंह चौहान

मेरे काव्यानुभव

अक्कित्तम
अनु. डॉ. आरसु

सूरज हमें पूरे आसमान को दिखा देता है। उस प्रकार का एक तत्त्व भूमि में भी है। शास्त्र बताता है कि वह सत्य है। कविता हमें सत्य दिखा देती है। वह तंत्री-लय समन्वित होता है।

मेरे ख्याल से कविता का मूल स्रोत आँसू है। मुझे लगता है कि ताऊ के आँसू ने ही मुझे कवि बनाया होगा। उन्होंने कई पुण्यकर्म किये थे। माताजी और पिताजी ने मुझसे एक बात कही थी। मेरा जन्म उन पुण्यकर्मों का परिणाम है। ताऊ हमेशा रोते रहते थे। उसकी वजह क्या होगी? यह मैं तलाशता रहता था। उनके मन की एकाग्रता कहीं-कहीं मुझको प्रेरित-प्रभावित करती रहती है। ऐसा मुझे हमेशा लगा था।ऐसा नहीं है तो मैं इस दिशा में कदम न रखता।

विश्वास ही जीवन का दीपक बनता है। यह भाव मुझे बहुत पसंद आया था। यह काव्य पंक्ति कुमारनाशान की है, लेकिन मूल विचार श्रीनारायण गुरु का है। कुछ लोग कहते हैं कि मेरे काव्यों में कहीं-कहीं एक बुद्धू बिंब छिपा पड़ा है। मैं। इस पर सजग नहीं थीं लेकिन अब यह बात सही लगती है। मैं इसकी वजह तलाशता हूँ। एड्विन आर्नल्ड का काव्य 'लाईट ऑफ एशिया' का अनुवाद मैंने बचपन में पढ़ा था। नालापाट्टु नारायण मनोन इसका अनुवादक था। कई बार वह काव्य पढ़ा। मन को बहुत पसंद आया था। मेरी कुछ कविताओं में बुद्धू छवि आने का कारण यही होगा।

मेरी कुछ कविताओं में दुःख प्रतिपादन के बीचोबीच हास्य व्यंग्य भी आया है। गुरुवर इडश्शेरी गोविंदन नायर ने पहली बार इस ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया था। आरंभकाल की एक कविता मैंने उनको दिखायी थी। वह कविता पढ़कर उन्होंने कहा तुम्हारी कविता में हँसी की फुलझड़ी है तब रोना भी तुम्हें संभव होगा।

1970 दशक के आरंभ में 'अनादि' नामक एक पत्रिका की स्थापना हुई थी। एरक्करा रामननं पूतिरि ने उसको नेतृत्व दिया था। मैं भी पत्रिका के संपादन से जुड़ता रहा। आध्यात्मिक विषयों को उसमें प्रमुखता मिली थी। वह मलयालम के अपने ढ़ंग की पहली पत्रिका थी। इडश्शेरी भी उसके पाठक थे। इस प्रकार का भी एक कार्यक्षेत्र है न यों कहकर उन्होंने बड़ा प्रोत्साहन दिया था। वेद सार कुछ लोगों तक सीमित न रहे। उसे सार्वजनिक बनाना है। यही पत्रिका का मुख्य लक्ष्य था। भौतिकता और आध्यात्मिकता को

अनुवादक डॉ.आरसु के साथ कविवर अक्कितम।

एक साथ ले चलकर जनता को नया संदेश पत्रिका दे सकी थी, लेकिन आर्थिक कठिनाइयों के कारण पत्रिका अधिक समय तक टिक न सकी।

आकाशवाणी के कालीकट तथा तृश्शूर केन्द्रों मे मैंने कुछ समय तक काम किया था। वह साहित्यिक जीवन का स्मरणीय प्रसंग था। उरूब पी. भास्करन, के.प. कोडुंगल्लूर जैसे कई साहित्यकारों का सहयोगी बन सका था। आकाशवाणी से सेवानिवृत्त होने के बाद एक बार मैं गुरुवायुर मंदिर गया था। मेरे मामाजी का बेटा मुख्य पुजारी था। उन्होंने प्रसंगवश मुझसे पूछा था। आप अवकाश प्राप्त हो गये न? अब भागवत पारायण कर सकते हैं न? फिर अनुवाद के बारे में भी सोचें तो बढ़िया होगा।

मैंने उनको यों उत्तर दिया। मैं संस्कृत का इतना बड़ा विद्वान् नहीं हूँ। उस प्रकार का काम करने के लिए भाषा में बड़ी विद्वत्ता चाहिये। यह मेरे वश की बात नहीं है। मेरा उत्तर इस बंधु को संतोषजनक नहीं लगा। वे बार-बार मजबूर करने लगे। तब मन में एक विचार आया। कोशिश करना मेरी जिम्मेदारी है। गुरुवायुरप्पन का आशीर्वाद अवश्य मिलेगा। प्रथम श्लोक का अनुवाद किया। करीब पच्चीस बार वह पंक्ति सुधारकर लिखनी पड़ी। फिर प्रक्रिया सुगम बन गयी। कई पद आये तो रोक-टोक लगी। इस बीच एक अजनबी मेरे घर आया। उन्होंने भागवत का एक पुराना मलयालम भाष्य मुझे भेंट किया। उनको पता नहीं था कि मैं इस अवसर पर भागवत का अनुवाद कर रहा हूँ। सुब्रह्मण्यन निरुमंबु का यह भाष्य मैंने ध्यान से देखा। उधर भाष्यकार ने समस्त पदों को उसी रूप में रखा है। मैंने वही मार्ग अपनाने का निर्णय लिया। अनिवार्य प्रसंगों में अन्वय और विग्रह करके अनुवाद के पद पर आगे बढ़ा। यह भगवान् का निर्देश था इस अनुवाद से मुझे बड़ा मनोविकास मिला। साथ-साथ एक नतीजा यह भी निकला कि मेरी कविता की धारा क्षीण बन गयी।

वाल्मीकि, व्यास, कालिदास की कृतियों से हमें एक अन्तर्दृष्टि मिलती है। काल की दृष्टि से उनकी कृतियाँ पुरानी होंगे, लेकिन उनकी चेतना चिरनवीन है। कालिदास ने बताया है कि हमारा जिन्दा रहना ही बड़ा अद्भुत है। इस कवि के भाव संसार की गहराई मैं कुट्टीकृष्ण मारार के भाष्य से समझ पाया था। 'नित्यमेघ' शीर्षक कविता मैंने इससे प्रेरणा पाकर लिखी थी। मारार ने सिर्फ मेरी उसी कविता की सराहना की थी।

मेरी कविता के बारे में मारार की यही टिप्पणी थी। 'नित्यमेघ' कविता कालिदास को अर्पित करने वाली अक्कित्तम की अंजलि है। 'मेघसन्देश' के निचोड़ को यहाँ कवि ने आवाहित किया है। यह एक अतिसुंदर व्याख्यान भी है।

खटकनेवाली एक बात यह है कि आज हमारी शिक्षा प्रणाली में भाषा का स्थान बहुत गौण बन रहा है। केरल के स्कूलों में मलयालम को नाम के वास्ते ही जगह मिलती है। एक अनुभव याद आ रहा है। 1994 में हम केरलियों का एक प्रतिनिधिमंडल अमेरिका गया था। कनाड़ा जाकर हमने न्याग्रा वॉटरफॉल भी देखा था। वैन में कई मलयालम भाषी थे। हमारी बातचीत से एक अमरीकी अचंभे में पड़ गये। आप लोग किस भाषा में बोल रहे हैं, उन्होंने पूछा यह हमारी मातृभाषा मलयालम है। हमने उत्तर दिया। अंग्रेजों ने आपके हिन्दुस्तान में दो सौ सालों तक हुकूमत किया था। तब ऐसी हालत में भी क्या आपकी प्रादेशिक भाषाएँ यों ही कायम रहती हैं? *''प्रकाश दुःख है वत्स, तम ही तो सुखप्रद है''* पंक्ति के आधार पर पाठकों ने कई चर्चाएँ की हैं। आज भी वह जारी है। भौतिक संसार की चकाचौंध की ओर मैंने संकेत किया था। मनुष्य के लिए यह काफी नहीं है। भौतिक दृष्टि से देखें तो अँधेरा ही दिखायी पड़ेगा। काव्य रचना के काल का एक रिफ्लेक्शन उस पंक्ति में है।

आध्यात्मिकता के बारे में उस जमाने की सोच ऐसी ही थी। मात्र भौतिकता को प्रकाश के रूप में हम न मानें। इस देश की एक चेतावनी उस पंक्ति में थी।

लोग इस पंक्ति के मूलाधार के बारे में प्रश्न करते रहे। तब मैंने गहराई से सोचा। कालिदास का एक श्लोक तब याद आया-

मरणं प्रकृति शरीराणां विकृतिर जीवित मुच्यते बुधैः
क्षण मत्यवतिष्ठते श्वसनयदि जंतुरननु लाभवानसौ

जीवन के हर क्षण में श्वास लेते हैं। श्वास लेने के लिए मिलता हर क्षण जीवन में मिलनेवाला लाभ है। इस जीवन का नाश अवश्यंभावी है। बचपन में इस बात से हम अवगत नहीं होते, किन्तु कालिदास की वे पंक्तियाँ पढ़ने पर मन में संस्कृति के रूप में उसका विकास हुआ। अनजाने ही ये दो पंक्तियाँ बाहर आयी थीं। आज अनुमान के आधार पर यही मेरी व्याख्या है।

साढ़े सात वर्ष की आयु में मैंने पहली कविता लिखी थी। बचपन में मंदिर गया था। उधर के श्रीकोविल की दीवार पर किसी ने मददे चित्र बनाये थे। यह बच्चों की करतूत होगी। एक दिन पहले यह चित्र उधर नहीं था। यह चित्र सुबह मंदिर की दीवार पर देखकर मेरे मन में रोष आ गया। मैं कोयले का टुकड़ा ले आया।

बगल की दीवार पर मैंने अपने मन की बातें लिख डालीं- *मंदिर दीवार पर यों / बगैर सोच विचार से / गंदे चित्र बनावें तो / शक्तिशाली ईश्वर आकर / सर्वनाश कर देगा।*

पूर्वजों का नमन करते हुए मैं एक बात कहना चाहता हूँ। मेरे ताऊ थे उनको छह बच्चे पैदा हुए थे। चार बच्चियाँ भी हुई थीं। बच्चियाँ काफी समय तक जिंदा रहीं। जब मैं पाँच साल का लड़का था तब ताऊजी गुजर गये। बच्चों के निधन के बारे में सोचकर ताऊजी हमेशा आँसु बहाते थे। वह दुःख मेरे मन में दृढ़ीभूत हो गया था। काले कंकड़, सफेद कंकड़ के रूप में ये अश्रुकण बदल रहे थे। स्नेह ताप के आँसू टपकने के कारण संगमरमर बन गया है। इस आशय की एक कविता मैंने बाद में लिखी थी। वह आशय असल में मेरा नहीं है। ताऊ के आँसू से वह कविता फूट पड़ी थी। एक संगमरमर की बीसवीं सदी का इतिहास शीर्षक काव्य पर जबरदस्त चर्चाएँ हुई थी। असल में वह एक तपस्या का परिणाम है। बहुत समय तक मन में जम गये। एक भाव को पहले बाहर प्रकट करने का मौका नहीं मिला था। उस भाव को बंद करके रखा था, लेकिन बंद रहे उस भाव को खोलने का अब समय आया था। कम्युनिस्ट पार्टी की कलकत्ता थीसिस में हिंसा मार्ग को अपनाने का आह्वान था। मानव जीवन को यों सताने का हक क्या व्यक्ति को मिलता है? मैं और वह अलग-अलग व्यक्ति नहीं हैं। दोनों में एक ही चेतना स्फुरित होती है। हिंसा मार्ग को अपनाना कदापि ठीक नहीं है। मन में बंद रहा भाव अब बाहर आया। न लिखना से परेशानी बढ़ेगी। तब मन से ये पंक्तियाँ अनजाने ही फूट निकली-

जब एक अश्रुकण / मैं औरों के लिए टपकाता हूँ / उदित होते हैं तब मेरी आत्मा में / सहस्र सौर मण्डल।

आरंभ में पंद्रह श्लोकों में मैंने इस आशय की पंक्तियाँ लिखी थीं। बाद में संक्षेप करके लिखने की कोशिश की। समीक्षकों ने सराहना की थी कि मार्डन पोयट्री है। विस्तार का नहीं संक्षिप्त का मार्ग मार्डनिज्म के अनुकूल बनेगा - यह बात देरी से ही मैं समझ सका था।

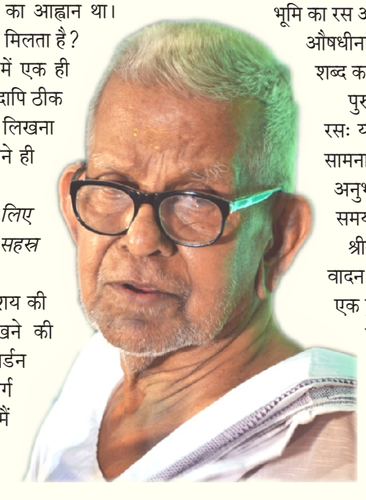

स्नेह शून्य और अनैतिक क्रांति हमारे देश की मिट्टी में जड़ नहीं जमा सकेगी। इस संदेश को मेरे काव्य में अभिव्यक्ति मिली है। असल में इसका श्रेय महात्मा गाँधी को मिलता है। उन्होंने 20वीं सदी को नवचैतन्य प्रदान किया था। मैंने उस भाव को कविता में लाने की कोशिश की थी। अहिंसा के महत्त्व को गाँधीजी ने ही राष्ट्र और समाज के समक्ष रखा था। उस काव्य रचना के जरिए मुझे एक युगधर्म को निभाने का सौभाग्य मिला। मैंने बाद गाँधी कथा को आधार बनाकर धर्मसूर्य शीर्षक एक खण्डकाव्य भी लिखा था। कर्मचन्द्र कैसे धर्मसूर्य बन गया - इसकी काव्यात्मक प्रस्तुति उधर मैंने की है।

बगैर फलेच्छा की कामना से करने वाला कर्म ही सारवान कर्म है। भगवद्गीता का यह सन्देश शाश्वत है। इसका प्रभाव मुझ पर पड़ा है। श्रीकृष्ण के बारे में सोचते वक्त अनजाने ही हमारे मन को एक आनंद मिलेगा। शिव के बारे में सोचते समय मन में डर पैदा होगा। मूल रूप में ईश्वर विचार आनंद है। कविता का रास्ता भी वही है। मेरे स्थल से सबसे बड़ा आनंद स्रोत संगीत है। उस सामगीत से आनंद का आस्वादन संभव होगा। उस आस्वादन के निमिष में हम अहं को भूल बैठेंगे। संगीत में लयलीन होकर हम साक्षात् आनंद बनेंगे। उपनिषद् का एक मंत्र मुझे हमेशा प्रेरित करता रहा है-

एषी भूतानी पृथ्वी रस / पृथीश आपो रसः / अप औषधेयो रसः

आस्मान पर कई तारे सुशोभित हैं। सब भूत हैं, इन भूतों के बीच का रस कौन-सा है? वह पृथ्वी है। चन्द्र और सूर्य को यह स्थान नहीं मिलता है। भूमि का रस अप है। अप असल में जमा है। जल का अप औषध है। औषधीनां पुरुषो रसः। इधर पुरुष का अर्थ नर नहीं है। पुरा शब्द का अर्थ आगे बढ़ने वाला है।

पुरुषस्य वाक् रसः याने पुरुष का रस वाक् है। वाचा ऋग रसः याने वाक् का रस ऋग है। ऋचासाम रसः साम का रस सामना उद्गीतो रसः ओम यह उद्गीत है। सबसे मौलिक अनुभूति अपने आपको भूल जाना है। उसमें लयलीन होते समय सब भूल जायेंगे।

श्रीकष्ण का मोरपंख लगाया बाल हिलेगा। फिर बाँसुरी वादन यह सब देखते वक्त हम जोर से हँसेंगे। उस ढ़ंग का एक पुराण पात्र नहीं है। एक कारण वही है। इसको हम ईश्वर या आनंद कहते हैं। श्रीकृष्ण को हम एक मनुष्य के रूप में मानते आये हैं। यह भावना समाज में कैसे आ गयी यह हमारी समझ से परे की बात है। स

मेरे जीवनानुभव

अक्कित्तम

अनु. आरसु

बचपन में मेरे मन में कोई विशेष कामना अंकुरित नहीं हुई थी। जीवन अपने क्रम से आगे बढ़ें- यों ही सोचा था। 10-12 साल तक वेदपाठ में मेरा जीवन बीता था। कहीं पहुँचने का लक्ष्य मन में अंकुरित नहीं हुआ था। कई लोग मेरी खिल्ली उड़ाते थे। वे मुझे मंदबुद्धि का बच्चा मानते थे। ऐसा उन्हें सोचने दें। उनका अनुमान मेरे निर्णय के आधार पर नहीं है न? उनकी सोच सिर्फ मजाक हो सकता है। मैं उनके अनुमान पर रोक नहीं लगा सकता हूँ। मुझे ऐसे ही जीवन बिताना है। मेरी क्षमता बहुत सीमित है। कैसे उस सोच से आज इस बिंदु तक पहुँच गया। इसका विश्लेषण करना बहुत मुश्किल है।

वेदपाठ के साथ-साथ अध्यात्म रामायण और महाभारत पढ़ने के लिए घर का वातावरण अनुकूल बन गया। पिताजी और माताजी का प्रोत्साहन मिला था। कुंजिकुट्टन तंपुरान ने महाभारत का अनुवाद मलयालम में किया था। अर्थ समझने के लिए उस अनुवाद का सहारा मिला था। जीवन में इससे बहुत अधिक फायदा मिला।

ज्योतिष में विश्वास करता हूँ। चौवा (मंगल) मेरी दशा है। जन्मकुण्डली में सबसे प्रभावशाली ग्रह मंगल है। सात सालों में इस दशा को पूरा बदलना है। ऐसी कामना मन में पैदा हुई। बाद में सोचा कि यह बिल्कुल मुश्किल है। सात साल से कामना यों बनी रही।

वेदों से मेरा लगाव बढ़ता गया। इस बीच कम्युनिज्म के कुछ आचार्यों से भी संपर्क हुआ था। मुझे लगा कि वेद का संवाद सूक्त और कम्युनिस्ट आचार्यों के सोशलिज्म में समान तत्त्व है। मैं उस आदर्श का सहयात्री बना, लेकिन बाद में पता चला कि कम्युनिज्म हिंसा के रास्ते को अपनाने पर बल देता है। कलकत्ता थीसिस की प्रस्तुति में वह आशय प्रकट हुआ था। हिंसा के मार्ग पर आगे बढ़ना मुझे बिल्कुल पसंद नहीं आया।

ज्योति को सूचित करने वाला शब्द है ज्योतिष्य। लेकिन ज्योतिष शब्द हमारी भाषा में रूढ़ हो गया। शुरू में मुझे ज्योतिष में विश्वास नहीं था। विख्यात ज्योतिषी एडकाल शूलपाणि वारियार ने मुझे ज्योतिष विश्वासी बनाया था। वारियार मेरे पिताजी के मित्र थे। वे कवि भी थे। एक दिन वे कविवर इडश्शेरी के साथ मेरे घर आये। मेरी बेटी पार्वती तब दो साल की थी। नुपूर हिलाकर तुतली बोली में वारियार से कहा कि आप मेरी जन्मकुण्डली बनाकर दीजिए। पार्वती से माँ ने यह बात कही थी। मैंने तब इस माँग का समर्थन किया। वारियार तब सहमत हो गये।

बच्ची का जन्म समय लिखकर देना था। वे चले गये। मैं यह बात भूल गया। कुछ महीने बीत गये। वारियार कुमरनल्लूर गाँव के हमारे घर आये। आते ही उन्होंने कहा पार्वती का जन्म समय लाइये। पिताजी ने अलमेरा में जन्मपत्री रखी थी। मैंने वह खोलकर जन्म समय देख लिया। वह पंचांग मैंने वारियार को दिया। वारियार ने नोटबुक और पंचांग तालमेल करके देखा। कुछ बातें समझने के बाद नोटबुक मुझे लौटा दिया। वह पार्वती की जन्मपत्री थी। 40 पृष्ठों के नोटबुक के पूरे पृष्ठों में कुछ बातें लिखी थीं।

जन्म निमिष उसमें लिखा था। पंचांग भी देखने के बाद पता चला कि उनमें एक क्षण का भी फर्क नहीं था। मैं तब आश्चर्यचकित हो गया। मैंने दोनों दस्तावेज देख लिये। 1126 कर्कटकम महीना 18वीं तिथि शुक्रवार उदय के बाद 9 नाविका 21विनाषिका जन्म लेते समय स्त्रीजन्म। तब मैंने वारियार से पूछा यह कैसे संभव हुआ? उन्होंने कहा शास्त्र में नष्ट जन्मपत्री प्राप्त होने के कुछ तरीके हैं। मैं तीसरी बार यह प्रणाली अपना रहा हूँ। अब मेरी गणना ठीक हो गयी है। पार्वती खुद आकर यह कामना प्रकट कर रही। यही उसकी वजह है। माँग का समय मैंने डायरी में नोट कर रखा था। इसलिए पिछले दिन पंचांग की समय सूचना नहीं पूछ ली थी। लिखकर देने के लिए मैंने नहीं कहा था। आपने मुझे दिया भी नहीं था। ज्योतिष में विश्वास आने का कारण यही था।

बेटी की जन्मपत्री लिखने के साल पहले शूलपाणि वारियार ने मेरी जन्मपत्री लिखी थी। तब मेरी आयु 23थी। तब तक मेरी तीन किताबें प्रकाशित हो गयी थीं। 'वीश्वादम', 'वलकिलुक्कम' और 'देशसेविका' यही मेरी किताबें थीं। उन्होंने कहा कि 1966 मई 23तारीख व्याषम दशा (बृहस्पति) शुरू होगी। इतना ही नहीं महाकवि का श्रेय भी मिलेगा। 1982 मई 24 तारीख को व्याषम दशा समाप्त होगी। फिर शनि दशा शुरू होगी।

वारियार की भविष्यवाणी ठीक निकली। 1973 दिसंबर में केन्द्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार की घोषणा आयी। अखबारों ने समाचार छापा। मेरा काव्य 'बलिदर्शनम' पुरस्कृत हुआ। अगले दिनों के 'मातृभूमि' अखबार में एक खबर आयी। बंबई के एक मलयाली संगठन ने मुझे महाकवि घोषित करके एक प्रस्ताव आया।

कालिकट आकाशवाणी केन्द्र ने एक बधाई समारोह का आयोजन किया था। 'मातृभूमि' के प्रबंध संपादक वी.एम.नायर ने बम्बई समाचार की पुष्टि करते हुए इधर एक भाषण दिया। मैं महाकवि हूँ या नहीं यह बात साबित करना इधर मेरा उद्देश्य नहीं है। संसार की सारी घटनाएँ ईश्वर की इच्छा के अनुसार आगे बढ़ती है। यही मेरा मकसद है। ईश्वर की इच्छा क्या है यह जानने का शास्त्र है ज्योतिष। इसकी पुष्टि करने वाले और भी कई अनुभव मेरे जीवन में घटित हुए हैं। सारे अनुभव एक बात सिद्ध करते हैं। *रूपम रूपम प्रति रूपो भवुवा...* हमारे सामने दिखायी पड़ने वाले सारे रूप ईश्वर के प्रतिरूप हैं।

चन्द्रमा में भ्रमण करके वापस आये वाहन में जाकर उसके यंत्रों के प्रबंध को देखने और स्पर्श करने के बाद समझ पाये 'नासा' के मुहूर्तों का स्मरण अब कर रहा हूँ। यह 1994 की बात थी।

विज्ञान में बारीकी है। ज्योतिष भी वैसा ही है। जो लोग इन विषयों पर काम कर रहे हैं। उनको कुछ गलतियाँ आयेंगी। ज्योतिष में भी अपूर्णता होगी। इन मुद्दों पर मुझे कतई मतभेद नहीं है, किन्तु अनुभवों के आधार पर सिद्ध हुई बातों को गलत नहीं मान सकूँगा।

आकाशवाणी में काम करते समय कुछ अनोखे अनुभव हुए थे। रेकार्डिंग के कमरे में बैठकर टेप ठीक करना था। कभी टेप टूट जाती है। उसको जोड़ना पड़ता है, रात में भी यह काम चलता था। एक रात की बात मैं कभी नहीं भूलूँगा। भूख-प्यास से मैं बहुत थक गया। तब मन में आशंका पैदा हो गयी। टूट-फूट कर छोड़ने वाली टेप के बराबर है मेरा जीवन। आज कदाचित् मैं बेहोश होकर इस रेकार्डिंग रूम में गिर पड़ूँगा। इधर ही मैं अन्तिम श्वास लूँगा। सुबह चपरासी आकर कमरे में झाड़ू बुहार करते समय कूड़े करकट के बीच मेरी लाश को भी देखेगा वह अपने सहयोगियों से कहेगा कि इधर के रेडॉर्ड के बीच एक मख्खी मर पड़ी है।

आत्मकथा लिखने के बारे में भी मैंने कभी नहीं सोचा। मेरी कविताओं में आत्मसंस्पर्श के कई प्रसंगों में आये हैं। 'उपनयन' तथा 'समावर्तन' मेरे निबंध संकलन हैं। उधर संकलित निबंधों में भी अपने अनुभवों का उल्लेख हुआ है।

क्रांतिकारी और ऋषि दोनों के कार्यक्षेत्र अलग-अलग नहीं है। सामाजिक जीवन की विसंगतियाँ देखकर क्रांतिकारी पैदा होता है। ऋषि का आविर्भाव भी समान परिस्थितियों में होता है। ऋषि तोड़-फोड़ का मार्ग नहीं अपनायेगा। उनकी दृष्टि में सौन्दर्य ही धर्म है। वह सौन्दर्य है।

मेरे व्यक्तित्व के निर्माण में पिताजी की बड़ी भूमिका रही है। वे संस्कृत के धुरंधर विद्वान् थे, पुरोहित भी थे। 'सनातनी' पुराण पंक्तियों की पत्रिका थी। 'योगक्षेमम' तथा 'उण्णिनंपूतिरि' परिवर्तन के पक्षधरों की पत्रिकाएँ थीं। पिताजी दोनों तरह की पत्रिकाओं के ग्राहक तथा पाठक थे, छत पर वे पत्रिकाएँ संभाल रखते थे। एक बार मैंने एक छड़ी लेकर ऊपर रखी कुछ किताबें नीचे गिरा दी थीं। यह बचपन की बात है। दो किताबें नीचे गिरी थीं। एक भगवद्गीता का भाष्य था। दूसरा ग्रन्थ एक नाटक था। वी.टी. भट्टनिश्पिाद कृत ''रसोई से रंगमंच की ओर'' उसका शीर्षक था। मेरे परवर्ती जीवन में इन दोनों कृतियो ंका पुष्कल प्रभाव पड़ा है। आध्यात्मिकता और भौतिकता के बीच समन्वय लाने की कामना मेरे मन में प्रबल बन गयी थी।

हाईस्कूल में पढ़ते समय योगक्षेम सभा की गतिविधियों से मैं जुड़ गया था। नंपूतिरि (ब्राह्मण) समुदाय में फैले अनाचार और अंधविश्वासों को समाप्त करना इस सभा का लक्ष्य था। 'स्मार्तविचार', 'भ्रष्ट' जैसे रिवाजों में परिवर्तन लाना समय की माँग थी। नम्बूतिरि को मनुष्य बनाना यही इसका मुख्य नारा बन गया। वी.टी. भट्टतिरिप्पाद सभा के संस्थापक थे। ई.एम.एस. नम्बूतिरिप्पाद, एम.आर.भट्टतिरिप्पाद, प्रेमजी, के.पी.जी. नम्बूतिरि, प्रो. एम.सी. नम्बूतिरिप्पाद, ओलप्पमण्णा, ओ.एम. अनुजन, चित्रभानु ये सारे व्यक्ति सभा के कार्यकर्ता थे। 1942 के अन्त में ओट्टप्पालम ओ.एम. हाऊस में सभा का एक अधिवेशन आयोजित हुआ। मेरी काव्याभिरुचि के बारे में वे जानकार थे। इसलिए उन सबका वात्सल्य मुझे मिलता रहा।

वेद अध्ययन के बाद अंग्रेजी और गणित में मुझे ट्यूशन मिला था। तब मैं 14 वर्ष का लड़का था। तृकंयिूर उण्णिकृष्णन मेरे ट्यूशन मास्टर थे। मैं कुमरनल्लूर स्कूल में पढ़ता था। 1942 की बात है। भारत छोड़ो आन्दोलन को नेतृत्व देते वक्त गाँधीजी की गिरफ्तारी हुई। छात्रों ने इसमें विद्रोह प्रकट करने का निर्णय लिया। छाती पर काला बैज लगाकर हम क्लास में घुसे। अध्यापक ने विद्यार्थियों को बाहर कर दिया। तब स्कूल के पूरे छात्र क्लास से बाहर निकले। एक जुलूस के बाद बैठक भी हुई थी। चार आने देकर मैंने कांग्रेस में तब सदस्यता ली थी। योगक्षेम सभा से जुड़कर काम करते समय उसके कुछ कार्यकर्ता साम्यवादी दल के सदस्य थे। आई.पी.सी. नंपूतिरि सभा के कार्यवाही अध्यक्ष थे। 1949 तक वे पार्टी के सक्रिय नेता थे। मैं सभा में उनके साथ कार्य करता रहा। साम्यवादी दल में सदस्यता लेने के लिए तब पार्टी के कई सदस्यों ने मुझे मजबूर किया था। ई.एम.एस. नंपूतिरिप्पाद से भी मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध था। पार्टी में सदस्य होने का रेडकार्ड दो बार मुझे दिया गया था, लेकिन सदस्यता लेने से मैंने इंकार कर दिया था। हिंसा का समर्थन करना मेरे लिए मंजूर नहीं था।

1950 दशक के आरम्भ में एक चुनाव आया था। तृत्ताला निर्वाचन क्षेत्र से विधानसभा के चुनाव में उम्मीदवार बनने के लिए मुझसे अनुरोध किया था। डॉ.के.बी. मेनोन सोश्यलिस्ट पार्टी के प्रत्याशी के रूप में मैदान में थे। उनके खिलाफ चुनाव लड़ने के लिए पार्टी के कुछ नेताओं ने मुझे चुना था। चुनाव में तुम्हारी जीत होगी फिर मंत्री बनने की संभावना है। ऐसी कुछ बातें कहीं थीं। इडश्शेरी ने बताया कि तुम्हारे मन में कुछ राजनीतिक मोह है तो यह अनुकूल अवसर है। देशाभिमानी अखबार के मैनेजर के.पी. माधवमेनोन ने भी मुझे मजबूर किया था। घर आये अतिथियों का तहे दिल से स्वागत किया गया था।

भावना बुनना मेरा नैतिक कर्तव्य बन गया। काव्य रचना के मुहूर्त में मेरा मन बीते बचपन, किशोरावस्था और तरुणावस्था की ओर मुड़ने लगा। चार-पाँच दिन में काव्य पूरा हो गया। मानव जीवन को धार्मिक-नैतिक मूल्यों की ओर उन्मुख करना है। उस मार्ग से अग्रसर होने पर ही हम सही लक्ष्य तक पहुँच सकेंगे। श्रेष्ठ मार्ग से आगे बढ़ने से ही श्रेष्ठ लक्ष्य तक पहुँच सकेंगे। श्रेष्ठ मार्ग से आगे बढ़ने से ही श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति संभव होगी। मार्ग और लक्ष्य का परस्पर सम्बन्ध मुख्य है। इस समझ से मेरे काव्य को स्फूर्ति मिली थी।

1951 में कृति पूरी हो गयी, लेकिन प्रकाशन के बारे में सोचा तो मन असंमजस में पड़ा। पाण्डुलिपि कुछ महीनों तक अपने पास ही रखी फिर शास्त्रशर्मन तिरुमुलप्पादु से बात कही। उनका प्रोत्साहन मिला। इसके बाद गुरुवर इडश्शेरी को दिखायी। तीन महीने तक उन्होंने यह अपने पास रखी। फिर मुझे वापस दे दी। उन्होंने कहा कि इसका प्रकाशन अनिवार्य है। पाण्डुलिपि फाड़ देने की सोच मन में नहीं आनी चाहिए। उनके मन में आशंका थी कि मैं पाण्डुलिपि फाड़ दूँगा। इसलिए बल देकर कहा कि पाठकों तक पहुँचने लायक वरिष्ठ काव्य है। 'मातृभूमि' साप्ताहिक को प्रकाशनार्थ भेजने का सुझाव भी दिया। इसका अच्छा नतीजा निकला। मलयालम कविता की विकास यात्रा में एक मील का पत्थर बनने का श्रेय इस काव्य को मिला। 1952 में इसका प्रकाशन हुआ।

लिखना अनिवार्य है इस प्रकार की मानसिक स्थिति में मैं लिखता हूँ। प्रकाशन के लिए निर्णय लेने में देरी होती है। मानविकता से बढ़कर मैं धार्मिकता को प्रश्रय देता हूँ। धार्मिकता से हटकर मानविकता टिक नही पायेगी। मानविकता सिर्फ मनुष्य की बराबरी पर सोचती है। धार्मिकता की स्थिति कुछ ऊँची है। वह मानव तथा मानवेत्तर जीवों के प्रति समान भाव रखने का सन्देश देती है।

वेद का समान मंत्र मुझे आकृष्ट कर रहा था। गाँधीजी का अहिंसा सिद्धान्त मुझे प्रेरक लगा। उनके अनुयायी के.केलप्पन के निकट संपर्क में मैं आया। अनाचार के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा वी.टी. भट्टतिरिप्पाद से मिली। कविता के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए इडश्शेरी गोविंदन नायर का मार्गदर्शन मिला। इन सबके प्रति मैं आभारी हूँ। स

अक्कितम की कविताएँ
हिन्दी में अनुवाद : डॉ.आरसु

पत्थर तोड़ने वाले

तोड़ता हूँ पत्थर सड़क के
छोर पर बैठकर/ ढेले कई
दिन, महीने, साल इसी हाल में।
आरंभ की स्थिति है आज भी
मुँह खुला रहता है असहाय-सा
क्यों अवतरित नहीं होता
करुणानिधि जगदीश
मेरे सम्मुख अन्न रूप में?

क्या सूनेपन के बगैर कुछ नहीं
स्थल-काल के इस चौराहे पर

काले कलूटे बादलों ने ढँक लिया था
कल आसमान का चेहरा देर तक
आज सूर्योदय होते ही हुआ आश्चर्य

ईश्वर ने धो डाली पूरी कालिमा
आसमान पर छा गया अब
स्वच्छ सुनहला मोहक रंग
निश्चित है एक बात
नित्य सत्य यही मालूम
जीव प्राणियों के देवालय में
प्रज्वलित रहेगी अनश्वर शून्यता!

तोड़ता हूँ मैं पत्थर
सड़क के छोर पर बैठ सालों से।

भाग्यरथों में भड़कते-दौड़ते
हे हँसमुख नौजवान, सुनो एक बात
आया था मैं इस सड़क पर बचपन में
हथौड़े से टुकड़े-टुकड़े कर दिया
करोड़ों काले कंकड़ याद है
फिर बिछाया सड़क पर
पता नहीं था आरंभ-अवदान का।
ढल गये साल अनगिनत
बन गया मैं पिता, फिर दादा
दोपहर की कड़ी धूप में
कंकड़ तोड़ता हूँ मैं आज भी
तुम्हारे बेटे होंगे कार के मालिक
उनकी गाड़ियाँ जायेंगी इधर से
तेज रफ्तार में रोज-ब-रोज
वे फँस न जायें बालू में
कदाचित् मैं आ जाऊँगा
उनकी गाड़ी के नीचे एक दिन
किंचित् आशा है मेरे मन में
क्या सूनेपन के बगैर कुछ नहीं
स्थल-काल के इस चौराहे पर?

कैसे बना संगमरमर ?

प्रचलित है जनश्रुति एक
दूरदराज के गाँव में,
पैदा हुआ था उधर एक गायक।
जब मुँह खोलकर गाने लगा
तब तरस उठे पत्थर भी
आते रहे उनको भी आँसू।
धीरे-धीरे बालक बड़ा हुआ
बन गया वह एक नौजवान
मिल गयी उसे एक संगिनी
वह सुन्दर सुशील दृढ़चित्त
निपट गरीब थे दम्पत्ति
तब भी बीते उनके दिन
बहुत अमन-चैन से।
हुकुम मिला गरीब गायक को
एक दिन राजमहल से अचानक
''हे गायक तू आ जा
मेरे दरबार में फौरन
जला देना इधर खुशी की बाती''
गुजारे का मामला है
सोच उसने माना हुक्कुम
बहुत मजबूरी से।
अश्रुकण-सा
एक नक्षत्र खिल उठा अगले दिन
घर के आँगन में उतर आया गायक
देखा एक दफा पीछे मुड़कर
द्वार पर खड़ी है संगिनी परेशान
बिदाई के क्षण में होकर आकुल
अँधेरा छाया है अथाह आँखों में
वज्र-सी दीख पड़ी उसकी
आँखें हैं बहुत उज्ज्वल।
* * *
गायक बन गया दरबार में
आँखों का तारा, मिला अंगीकार
किरीट के मोती समान उधर
लगा उसको दरबार नर्तकियों के
निर्दय नयन डँसते सर्पफणों-सा
कोशिश में लगी वे बनाने को
गायक के पत्थर-से मन में
करने को छेद
पत्थर के नीचे थी सहिष्णुता की
निर्मल निर्झरी, सूख गयी वह भी
इस क्षण में स्वयमेव
नुपूर ध्वनियों के ताल लय के साथ
वह गाता गया गाना
हो गया आत्मविस्मृत
अचानक बंद हो गये होंठ
स्तब्ध हो गये सभी
एकदम देखते-देखते
उत्कट होकर हँस पड़ा वह एक क्षण
बेरोक बन गयी हँसी
गिर पड़ा फर्श पर बेचारा
आँखें छलक उठीं अविरल अश्रुकणों से।
* * *
उस नादान आदमी के ऊपर से
ढल गये पहर दिन महीने वर्ष कुछ
ठहाका मारकर तरंगों में भटकने
सूखे काष्ट की भाँति
अब न रहे दरबार न नर्तकियाँ
राजा भी लीन हो गये चिरनिद्रा में
काफी समय से धरती पर लेटा
गायक न उठा फिर कभी
मटियामेट राजमहल में
जिन्दा रहता है मिट्टी बनकर
उसके आँसू का हाल
समय की ठण्ड में जम गया
फिर धीरे-धीरे फैल गया
धरती-धरती में लगातार
आज जाना जाता है वह
संगमरमर के रूप में विश्वभर।
कई वारिस आये राज परिवार में
उनको हर्गिज पता न चला
इस गंभीर सत्य का
वे नाचते-गाते रहे दासियों के संग
बड़े आमोद-प्रमोद से
(मूर्खता से बढ़कर कुछ नहीं है
तीनों लोकों में निंदनीय)
काट-काटकर उस सुंदर वस्तु से
बनवाने लगे महल आलीशान
तब भी समाप्त नहीं हुआ
मनोहर संगमरमर आज भी
जारी है उसका फैलाव।
किसने कब सुनाया था यह
पुराना किस्सा मुझे
कह नहीं पाती मेरी जीभ
वह विस्तार से
क्या नाम दूँ मैं
उसे सत्य के बगैर
मन के बगैर नहीं है
भगवत् मूर्ति कहीं।

हाथ का आँवला

बोल सखी, क्या सुना तू ने
मेरे मुँह से इस युग की चीख।
बोल सखी, क्या देखा तू ने
मेरी आँखों में इस युग की कुरूप दारुण छाया?
बोल सखी, क्या तुझे महसूस हुआ
इस युग की बदबु मेरे श्वास से ?
बोल सखी, क्या तेरी छाती ने पहचानी
इस युग का विस्फोट मेरी नसों में
बोल सखी, क्या चखा तू ने
इस युग का कड़वापन मेरे अधरों से?
***

तो मैं क्यों चुप रहूँ उस
भीषण यथार्थ का रहस्य अब भी?
'भ्रमणामिते सौभगत्वाया हस्त'
रटा था मैंने यह मत्र
पाणिग्रहण किया था तूने मेरा
तर हो गया था मेरा तन स्वेद से!
फूल सा कोमल
तेरे जीवन के मृदुल दलों में
अनजाने मैंने नाखून से
कुरेद डाला प्रलोभन में।
वह स्वेद है आज भी मेरी
आत्मशक्ति में बन मोती किरीट
उज्ज्वल प्रभा चमक उठती है
तीव्र बोधांधकार में
अगर न मिलता वह आशीर्वाद
अतीव दुःख से कहना पड़ताः
'गृभणामी' श्लोक आलाप कर
तेरा हाथ पकड़ा पुरुष
कोई भी अमूल्य स्थमंतक दान
कोई भी अपूर्व सौगांधेक पुष्प
खड़ा है तेरे सामने
उन दिनों का गाना आज
मैं गा न सकता
तब बताया हास्य आज
पेश करने पहुंचा आज
खो बैठा हूँ मैं प्रिये
आज आँसू निस्पंद हैं
आँख से थाह लेता हूँ मैं बातें स्पष्ट
मेरी हथेली में रखे आँवले सा
लगता है पूरा संसार
यह छोटा फल दाबना
यह छोटा फल काटना
दाँत से ज़रा छूना...
सब मुश्किल है अब मुझे
***
सच है मापा होगा मैंने
एक कदम पूरा संसार
आचमन किया होगा मैंने
सागर भर का पानी एक चुल्लु में रख
फिर भी सखि, निशाहीन
लाल लाल अंगारे बरसाते सूर्य में
बगैर हवा के शून्याकाश में
विप्रवास के दुःख में
जल गया मेरा प्राणहीन शरीर
बन गया कितना कुरूप
अवगत हूँ मैं बात से
000

राख बने मेरे कर्मकांडों में
कौन कौन सा तत्व
बना देता है मुझे धीर कहूँ?
तेरा रूप रंग, स्वर
सुगंध बरसाते केश
हर दिन तुझ में खिल उठता है
अनाद्यंत धन्य चैतन्य, नव्यप्रभात
तेरी थकान मेरे अश्रुकण
फिर तेरा पावन प्रार्थना भाव!

पारसमणि

कहाँ ओझल हो गये
बचपन में मेरी हथेली में
पड़े पारस मणि आज ?
कोसों दूर पैदल चल आयी
दुनिया ने दस्तक दी थी
मेरे दरवाज़े पर
कोई भेद नहीं था उन दिनों
स्त्री, पुरुष, बच्चे, बुजुर्ग
आते थे इधर आहलाद से
वे लाते थे लोहे की
सूई, कील, छूरी,
जाते थे वे वापस
बदल उन्हें सोने में
आज मुझे लगता है वह
दृश्य एकदम अजीबो-गरीब
उन दिनों इस इलाके में थे
मात्र टीलों, पहाड़, सोना उगाती मिट्टी,
झाड़-झखाड औ साँप

धोती तर हो गयी थी पानी में
बाँस का छोटा फाटक
पाट करते चक्त।
आते थे जो भी आदमी इधर
बगैर पड़े कीचड़ कपड़े में
चोट लगती थी उनके पैर में।
खून निकलता था उनसे
पार रोड़े जितने भी हो वे आते थे
हाँफते सिसकते इधर
असंख्य आदमी थे थके-माँदे
नींद नहीं आयी थी उन्हें
तकलीफ ज्यादा झेलकर
उनके आने की वजह क्या होगी?
यकीन किया था उन्होंने
मेरे पास रखे पारस मणि में,
बहुत ख्याति मिली थी उसे।
मगर तनिक भी पता नहीं था
मुझे उस अनमोल वस्तु की तासीर।
उनकी लायी लोहे की चीज़ें जब मैं
छूता हूँ क्षणभर में बदलती हैं वह सोने में,
अवाक रह गया मैं!

कहाँ गायब हो गये
बचपन में मेरी हथेली में
पड़े पारस मणि आज?

अपनी चीज़ को सोना बनाने
आये आदमी लाते थे भेंट-
फल-वल कपड़े गहने
कामना नहीं थी मेरे मन में
यों मिली थी ये भेंट तोहफे में
मिला था हल्का हर्ष
लेकिन न मिला पूर्ण संतोष
कभी-कभार मैंने छू लिया
अति रहस्य में-सोचा तब
ये सारा लोहा बनेंगे सोना
मेरे छूने से निकलेगा नतीजा
बनूँगा मैं आज का बड़ा कुबेर!

जब लाते हैं दूसरे लोग
अपने पास के लोहे को
बदलते हैं वे क्षणभर में
मेरे अंगुली-स्पर्श से
मगर अपने पास का लोहा
छूने पर पड़ता नहीं कोई फरक
तब उमड़ आती है मेरे मन में
बड़ी निराशा, रोकना है मुश्किल
शुद्रि और पीला रंग
गुण ये अनिवार्य है न?

कहाँ गायब हो गये
बचपन में मेरी हथेली में
पड़े पारस मणि आज?

फिर सो गया मैं रात को
आँख मींचकर मैं जाग उठा
पौ फटते ही - देखा तब
काले काले पुड़िये चौंक उठा मैं
दातौन करने निकला पता चला तब
नामोनिशान नहीं मुँह में दाँत का
सुनायी पड़ती औरों की बात
मैं अब लवलेश - चिंता में डूबा
बैठा रहा हाथ सिर पर रख
बरामदे में कई देर।
अकस्मात कुछ विदेशी आये
कार से उतरे मेरे आँगन में
रातों रात किसने बनायी इधर सड़क
मोजे, पतलून, कंठ लगोटी पहने हैं
आते हैं सीधे बरामदे की ओर
पीछे आई लॉरियाँ असंख्य
भर लोहे के घड़े, अन्दाजा हुआ तब मुझे
झाँक रहे हैं मेरे पारस मणि की ओर वे
मेरा बुढ़ापा पूछने लगा
क्या वह है मेरे पास
मजबूर करने लगे वे "आप ज़रा
स्पर्श करें इन छड़ों को"
क्या जवाब दूँ मैं उनको
पसीने से तर हो गयी मेरी सोच
पकी दाढ़ी फेरता रहा मैं
नागस्वर बजने के समान
सुनी मैंने अपनी नाड़ी स्पंदन आवाज़

कहाँ गायब हो गये
बचपन में मेरी हथेली में
पड़े तुम पारस मणि आज ? स

नित्यमेघ

अनुवाद : उमेशसिंह चौहान

प्रिया-विरह पीड़ा की
अग्नि से, धूम-जाल से,
निःश्वास वायु से, काल
पुरुष ने बनाये हैं

अश्रुओं से वर्षा-मेघ
उड़ान है लीलामयी,
शिशु की पतंग जैसे
भावना नभ-छोर में
* * *
समुन्नत मनुष्यात्मा
घनी हरियाली भरे,
रामगिरि आश्रम में
पुष्पित द्रुमों के तले।

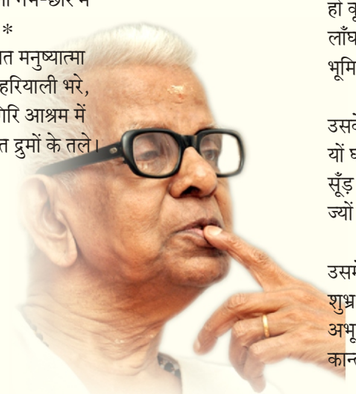

आषाढ़की एक भोर,
शीत-लघु मीठी हवा,
शोर सुनती बहेगी,
वन्य-पथ के बीच में।

निर्निमेष बरसती
एक मानव-मूर्ति है,
नभ में उछलती-सी
पूर्णमुग्ध भू-छोर में।

नीलाकाश समुद्र में
हो कूदने की चाह ज्यों,
लाँघने को तने पैर
भूमि-भार समेटते।

उसके दृग समक्ष
यों घनघोर मेघ डटे
सूँड़ पहाड़ में धाँसे
ज्यों दन्तुल हाथी खड़ा।

उसमें उछलें-कूदें
शुभ्र जलपक्षी यथा,
अभूतपूर्व कलियाँ ज्यों
कान्त मनोभाव की।

उसमें बिम्बित हो ज्यों,
निर्जन रामगिरि से
अलकापुरी तक का
आर्यावर्त सारा सुखी।

एक निर्मूक सदन
अलकापुरी में दिखे
इन्द्रधनु-प्रभा में तनी
कमान की पीठ पे।

द्वार खड़ा कल्पवृक्ष
खिले, झरे फूलों भरा
अन्दर अकेली बैठ
रोती है लोक रूपसी।

आँसू भीगी वीणा के
चली जो तार छेड़ने
तो स्वयंरचित गान भी
भूल गयी कामिनी।

'शुकी ! मेरा प्रियतम तुम्हें
अभी भी याद है क्या '
ऐसा कह, पंख सहलाती
मृदुल उसके कामिनी।
* * *

देख यह वर्षा-मेघ
काल थम, याद करे,
मुरली धरे विश्व के
शासक श्यामदेहि को।

'उसके मुख में दिखे
विश्वरूप जैसा मुझे
विस्मित करता है मेघ!
तुम्हारा महारूप ये।

सर्वभक्षी मेरा मुँह
पहुँचता तुम तक कि
रुद्ध करा दिया तूने
आनन्दाश्रुओं से उसे।

थकती वन लता क्या
शकुन्तला वियोग में,
खिलता अशोक क्या
हर्षित मालविका पग छू ?
कौत्स्य कंठ रुँधे क्या
रघु की दान-वीरता,
नील दीर्घ गौरी नैन
डिगाएँ रुद्र चित्त क्या।

पुरुरवा के चतुर्दिक
अप्सरा की कृतज्ञता
मेघ! तुम्हारे सीने में
प्रतिफलित क्या-क्या न हो?

घनीभूत हो उद्विग्न
एक मानवी कल्पना
झुके भू तक गर्व मम,
मैं भी तुम्हारे सामने।
* * *
कालपुरुष स्थित है
नित्य सौभाग्य पीठ में
अवनत, काल दृष्टि का
स्नेह-स्पर्श सँवारते।

उसके पाद पुष्प छू
काल धरता शीश पर
सहलाता वह सस्मित
गँठियाये कर वाम से।

छिद्रित हीर-रत्नों के
भीतर से मैं गुजर सका
भाग्यवश ही, क्योंकि मैं
बस एक धागा मात्र था। स

अनवरत् आग धधकाती धौंकनी

एम.टी. वासुदेवन नायर

मेरे अन्तस में कवि के रूप में जन्मे, मनुष्य बनकर पले-बढ़े तथा बड़े भाई के रूप में स्थापित हो गये अक्कित्तम के विकास व उनकी परिणति को, निला (नदी) को देखते रहने में सन्निहित कौतूहल व आराधना के साथ देखने वाला व्यक्ति हूँ मैं। नदी सूख जाती है, किन्तु अक्कित्तम के मन की कविता व करुणा कभी नहीं सूखती। वह नित्य एक पुण्य स्वरूप में प्रवाहित होती रहती है। कविता व जीवन दोनों में ही अच्छाई की उपासना करने तथा उसे जीवन्त बनाने वाला यह मनुष्य मेरे मन में 1942 से ही जगह बनाने लगा था। उन दिनों जब मैंने कुमरनल्लूर हाईस्कूल में 'फर्स्ट फार्म' में प्रवेश लिया था तब अक्कित्तम वहाँ 10वीं या11वीं में पढ़ते थे। छोटे भाई वासुदेवन मेरे क्लास में थे। मेरे बड़े भाई अक्कित्तम के मनक्क्यल में नित्य जाते थे। वहाँ बुखारियों वाली बैठक में ढेरी लगाकर रखी हुई पुस्तकें उनका आकर्षण होती थीं। धीरे-धीरे मैंने भी 'मना' के ग्रन्थ-संग्रह में पठन का संसार देखा। कितने-कितने ग्रन्थ थे। भारतीय संस्कृति की आधारशिला बने महाग्रन्थों से लेकर नूतन विचारों का प्रकाश फैलाने वाली आधुनिक पुस्तकें तक वहाँ थीं। ज्ञान व अनुभूति प्रसारित करने वाला विविधतापूर्ण पुस्तक-संसार। छुट्टियों के लिये वह स्थान हमारा एक आश्रय-केन्द्र बन गया। हर बार मैं दस पुस्तकें उठाता था। मेरी पठनशीलता व लेखन को मजबूत बनाने वाले ऊर्जा-भंडार के रूप में वह पुस्तक-संसार मेरी यादों में आज भी बसा है।

एस.एस.एल.सी. के बाद जब मैंने लघु-पत्रिकाओं में लिखना शुरू किया तब साहित्य सम्बन्धी शंकाओं व जानकारियों के लिए मैं अक्कित्तम के पास ही जाता था। अध्यापकों तक को दिखाकर अपने लेखों के बारे में मन्तव्य जुटाने की इच्छा न रखने वाला मैं इस बारे में केवल अक्कित्तम पर ही आश्रित था। अक्कित्तम मना में नहीं होते तो छपी हुई सामग्री वहीं रखकर आ जाता था। वे आकर उसे पढ़कर, एक कोने में अपनी टिप्पणी लिख देते। सारे प्रोत्साहित करने वाले विचार होते। आलोचना, विमर्श अथवा उपदेश नहीं होते - लेखन का विस्मय-बोध व प्रगति की ओर ले जाने वाला मार्गदर्शन भर होता था। उस समय स्कूल में तथा बाहर भी बहुत सारी अक्षरश्लोक प्रतियोगिताएँ होती थीं। पुरस्कार प्राप्त करने की राह में रोड़े की भाँति चुभता था 'ण'। मुझे 'ण' से शुरू होने वाला श्लोक चाहिए था। रास्ते में अक्कित्तम मिल गये। "क्या बात है वासु?" 'ण' से एक श्लोक चाहिए, स्रग्धरा में होगा क्या?" मेरे शोक में से जन्मे अक्कित्तम के श्लोक के कारण पुरस्कार खुशी-खुशी मेरे सामने बिछ गया। 1944 में अक्कित्तम की पहली कृति आयी 'वीरवादम'। मुझमें अन्तर्निहित सहिष्णुता हमेशा मेरी विद्वता के रूप में गजराज के शीश की भाँति सिर उठाकर तनी रहेगी' - इस सत्य का वीर-घोष सामाजिक-न्याय के बोध व अधिकारों के निषेध के प्रति तेजी से लोगों को जगाने के लिए ही किया गया था इसमें।

"यह मृत यथास्थितिवाद का सिंह गर्जन करेगा ही यह सोचकर, निर्भय हो बाहर आ जा, जन्म-सुख की खोज में तू! नम्बूदिरी बोला!"यह आह्वान करने वाली 'ऋतुमतियुडे मुम्बिल' कविता इसी संग्रह से है। 'करिचन्दा', 'कोविलिलेक्क' आदि अन्य कविताओं में भी कुछ तो उसी समय चर्चा का विषय बन गयी थीं। उस समय समाज-सुधार के क्षेत्र में प्रमुख भूमिका निभाने वाले नाटकों के रंगमंच पर रचना, अभिनय व संगठनात्मक गतिविधियों में अक्कित्तम ने काफी अधिक योगदान किया। एम.आर.बी. के 'मरक्कुडक्कुल्लिले महानरकम' में अन्तर्जनम के वेश में अक्कित्तम का अभिनय आज भी याद आता है।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा दिये गये सम्मान के दौरान श्री अक्कितम।

वी.टी.इडश्शेरी, पी.सी. आदि ने मुझमें अक्कित्तम श्रीधरन नायर का चरित्र निभाया। वी.टी. इडश्शेरी, पी.सी. आदि मुझमें अक्कित्तम के माध्यम से ही प्रविष्ट हुए। पोन्नानी कला समिति तथा बाद में मलबार केन्द्र कला समिति द्वारा किया गया। साहित्यिक योगदान ऐतिहासिक है। एस.के. पोट्टेक्काट, पी.सी., के.डी. मुहम्मद, तिक्कोडियन आदि उन दिनों अक्कित्तम के साथ अग्रिम पंक्ति में यत्नशील थे।

कॉलेज की पढ़ाई पूरी करके पट्टाम्बी में अस्थायी तौर पर अध्यापक के रूप में काम करने के बाद मैं एम.बी. ट्यूटोरियल चला रहे पालक्काड के मूस्सत से मिला। हाथ में अक्कित्तम का पत्र था। इस प्रकार मैं ट्यूटोरियल अध्यापन, गाइड-लेखन, मलयालम पाक्षिक प्रकाशन आदि से जुड़कर जीवनयापन करने लगा। इसके बाद ही मैं 'मातृभूमि' से जुड़ा। उन दिनों अक्कित्तम आकाशवाणी में कार्यरत थे। कुछ महीने बाद हम एक साथ एक लॉज में रहे। फर्श पर चटाई बिछा, उसी पर उकडू लेटकर होता था अक्कित्तम का लेखन उन दिनों। कभी-कभी यह प्रातःकाल तक चालू रहता। अगले दिन पढ़कर सुनाते। अति गम्भीर उनका शब्द-उच्चारण कविता के अन्तर्नाद को प्रस्फुटित करता था। उनमें से अनेक कविताएँ मेरे मन में बसी हैं। 'इरूपदाम नूट्टाण्डिंडे इतिहासम', 'बलिदर्शनम', 'इडिञ्युपोलिञ्या लोकम', वेणाक्कलिंडे कथा' आदि काव्य-कृतियाँ आज भी मुझे प्रेरणा देती हैं। मातृभूमि साप्ताहिक पत्रिका में 'ए.एन.ए' के नाम से अक्कित्तम द्वारा लिखी गयी पुस्तक-समीक्षाएँ काफी आकर्षक होती थीं। अषीक्कोड की 'रमणनुम मलयालाकवितयुम' नामक पुस्तक के लिए 'चङ् ङ म्पुषायुडे कीर्तितल्पम' नाम से लिखी गयी समीक्षा अत्यन्त सूक्ष्म-स्तर का मूल्यांकन करती है। इसमें प्रशंसा अथवा खंडन जैसे विमर्श की तरह का विश्लेषण नहीं था। इसमें मंगलकारी तूलिका-चित्र शक्ति-युक्त सौन्दर्य के साथ अत्यधिक आकर्षक होकर उभरे थे। लोक-गीत, बाल साहित्य, नाटक आदि साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में कविता अपना योगदान करती है।

पं. कुंजीरामन नायर के कथनानुसार अक्कित्तम की धौंकनी में हमेशा एक कविता का अंगारा धधकता है। कभी आग न बुझने देने वाली इस

धौंकनी से मनुष्य प्रेम व अच्छाई कविता के लावण्य के रूप में उद्भूत होती है। 'मधुविधु' की कविताएँ तीक्ष्ण संवेदनापूर्ण लौ को उद्दीप्त करती हैं। दाम्पत्य का माधुर्य व नम्यात्मक लगाव एवं प्रेम की तीव्रता, काल्पनिकता से भी आगे निकल कुछ अन्य भाव में परिवर्तित होती है तो कवि के आत्मतोष की अनुभव सम्पन्नता के कारण ही लौकिकता के नाद को गहन बनाने वाली 'मधुविधु' संग्रह की कविताओं में फटडे शापम्, 'मधुविधु', 'निंडे निरम' आदि आज भी यादों में बसी हैं। इस संग्रह में किरती ज्वाला की कभी कम न होने वाली तीव्रता का आधार भौतिक प्रणय की काम-भावना व कमनीयता है। जैसा बहुतों ने कहा है, चङ् ङ म्पुषा के प्रभाव में नहीं, आत्मनिष्ठापूर्ण अनुभवजन्य संकल्पों से ही इन रचनाओं का जन्म हुआ है। राजनीतिक सिद्धान्त-शास्त्र अथवा आत्मीय सच्चाइयों में यदि कोई विश्वास करता है अथवा उनके लिये काम करता है तो उसका आधारभूत कारण एक ही होता है- मनुष्य-प्रेम। सक्रिय राजनीति के भागीदार बन, वालंटियर, कैप्टन तथा अन्य रूपों में अक्कित्तम ने काम किया था। मनुष्य-समूह के प्रति जिज्ञासा, पीड़ा व चिन्ता ही मनुष्य को तपस्वी अथवा क्रान्तिकारी बनाती है। अहिंसापूर्ण मार्ग पर चलने के लिए अक्कित्तम ने स्वयं को समर्पित कर दिया। 'इरूपदाम नूट्टाण्डिंडे इतिहासम' इसका मूर्त्त रूप है, लेकिन अक्कित्तम ने कवि-हृदय में उपजे परिवर्तन के स्वभाव का प्रकटीकरण है यह काव्य-कृति, यह कहने का कोई औचित्य हो ऐसा नहीं प्रतीत होता। अक्कित्तम तब भी और आज भी वही है। उनके जीवन अथवा उनकी कविता के दर्शन में कोई भी परिवर्तन आकर समाया हो ऐसा मुझे नहीं लगता। मुझे 'वासु' कहकर बुला कुछ भी निर्देशित करने का अधिकार इस ज्येष्ठ भ्राता को हमेशा रहा है।सिद्धान्त के शास्त्रों व मार्गों से ग्रसित जीवन की नौकाओं में अहिंसा, अच्छाई, मानवीयता आदि बिछा देने वाले अक्कित्तम जन्मना कवि हैं। आत्मान्वेषण के मार्ग में अश्रुकणों को घनीभूत करती हैं अक्कित्तम की कला। अक्कित्तम का भागवत-अनुवाद एक बड़ा योगदान है। भारतीय विचारधारा व ज्ञान की तपस्या इसके पीछे छिपी है। गुरु व शिष्य - इडश्शेरी व अक्कित्तम - मनुष्य को व उसकी पीड़ा को स्वयं के धरातल से खोजकर निकालने वाले हैं। उनके मनुष्यों की गर्मी व गन्ध मिट्टी से जुड़ी है। निला नदी में सन्निहित मानवीय-संस्कृति कालखंड के साथ प्रवाहित होती है। निला का विस्तार बढ़ता जा रहा है अपने तटीय-क्षेत्रों में नयी वनस्पतियों को स्थान प्रदान करते हुए। स

(लेखक मलयालम के वरिष्ठ साहित्यकार हैं)

साक्षात्कार

सशस्त्र क्रांति से समाजवाद प्राप्त करने का तरीका मुझे पसंद नहीं आया

वरिष्ठ मलयालम कवि अक्कित्तम से डॉ. आरसु की बातचीत

ज्ञानपीठ पुरस्कार. साहित्य अकादमी तथा केरल के सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार एषुतच्छन आदि कई महत्त्वपूर्ण सम्मानों से सम्मानित श्री अक्कितम मलयालम साहित्य के वरिष्ठ कवि हैं। प्रचीनता और अर्वाचीनता का संगम उनकी कृतियों की खूबी है। संस्कृत भाषा में गहरी पैठ होने के कारण वेद, उपनिषदों का गहरा प्रभाव उनकी कृतियों में देखा जा सकता है। बीसवीं सदी का इतिहास, चकनाचूर दुनिया, बलिदर्शनम, स्पर्श मणिल धर्म सूर्य, अन्तिमहाकाल, प्रतिनिधि कविताएँ आदि उनकी बहुचर्चित कृतियाँ हैं। ज्ञानपीठ ने वर्ष 2009 में उमेशचन्द्र चौहान द्वारा अनूदित प्रतिनिधि कविताओं का अनुवाद प्रकाशित किया था। यहाँ प्रस्तुत है मलयालम के प्रसिद्ध विद्वान् अक्कितम जी से ख्यात अनुवादक तथा हिन्दी प्रेमी डॉ.आरसू की एकदशक पूर्व हुई बातचीत के कुछ अंश।

आरसु : आप अस्सी वर्ष के हो गये। अशीतिः एक स्मरणीय और सार्थक प्रसंग है। अब कुछ पुरानी स्मृतियाँ मन में प्रबल बन जाएँगी न! आपने कहा था अच्छे ताल-लय के साथ माँ रामायण का पारायण करती थीं। इसका असर आपके मन पर पड़ा। परवर्ती जीवन में इस प्रेरणा का प्रभाव कैसे पड़ा?

अक्कित्तम : संगीत और भक्ति की अभिन्नता मन को उद्दीप्त करेगी। बचपन में मेरे मन में यह बोध पैदा हो गया था। वह परिवेश मिलने के कारण ही पच्चीस साल की उम्र में उपनिषद् मन्त्र के प्रति मेरा मन आकृष्ट हो गया था, 'एषां भूतानाम् पृथ्वीरसः' मन्त्र बहुत प्रेरक लगा था। काव्य-यात्रा में वह मेरा मार्गदर्शन करता रहा।

आपकी प्रथम पंक्ति का प्रसंग स्मरणीय है। मन्दिर की दीवार पर बुझे कोयले से आपने वह पंक्ति लिखी थी। आपका असन्तोष ही उस पंक्ति का मूल तत्त्व था। अस्सी वर्ष की स्मृतियों में उसको भी स्थान मिलेगा न?

कुछ लोग मन्दिर की दीवारों पर अश्लील बातें लिखते थे। ऐसे चित्र भी बनाते थे। यह देखकर मेरा बाल मन शान्त न रह सका। वह विद्रोही हो उठा। मेरी पंक्ति का आशय यही था। मन्दिर की दीवार को गन्दा करने वालों को ईश्वर आकर सजा देगा। उनका जीवन बर्बाद हो जाएगा। पंक्ति के नीचे मैंने अच्युतन उण्णिनाम भी लिखा था। इस अनुष्टुप छन्द को देखकर मैं स्वयं चकित हो गया। सात-आठ साल के हम उम्र बच्चों ने मुझे बधाई दी थी। 1974 ई. में मुझे साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला था। अपनी आरम्भकालीन पंक्तियों का अर्थ मैंने उमाशंकर जोशी को बताया था। उन्होंने तब 'I have noted the poem you have quoted' अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। उसमें कविता का बीज था।

मैंने पहले मंगल श्लोक लिखा था। विवाह मंगल श्लोक उन दिनों पत्रिकाओं में छपते थे। टी.एस. भट्टत्तिरिप्पाद के विवाह के अवसर पर मैंने यह श्लोक लिखा था। मंजरी छन्द में टैगोर के बारे में कुछ पंक्तियाँ लिखी थीं। राजर्षि में ये कविताएँ प्रकाशित हुई थीं। नटुविलपा कलमी नाम से कुछ लेख भी प्रकाशित हुए थे।

उन दिनों नम्बूदिरी परिवार रूढ़िवादी परम्परा के कट्टर समर्थक थे। सुधार के लिए कुछ परिश्रम भी हुआ था। उस आन्दोलन को किसने नेतृत्व दिया था?

जी हाँ, तब नम्बूदिरी परिवारों में रूढ़िवादिता की जड़ें जम गई थीं। स्त्रियों को छाती पर कपड़ा पहनने का हक नहीं मिला था। इसके खिलाफ आन्दोलन चलाया गया था। 'योगक्षेम सभा' का गठन हुआ। वी.टी. भट्टत्तिपरिप्पाद, ई.एम.एस. नम्बूदिरीपाद और वी.टी. रामन भट्टत्तिरिप्पाद इसके नेता थे। एक नवोत्थान आन्दोलन बन गया।1941 में 'योगक्षेम सभा' का पुनर्गठनहुआ। नम्बूदिरी युवक तथा युवतियाँ इस आन्दोलन के सन्देशवाहक बन गये। राजनीतिक दृष्टि अलग होने पर भी समाज सुधार के लक्ष्य की पूर्ति के लिए वे इकट्ठा हो गये। व्यक्ति के मन की पवित्रता ही समाज की पवित्रता है। यही उनका दृष्टिकोण था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी सनातन धर्म के प्रचार में वी.टी. भट्टत्तिरिप्पाद लगे रहे। मैंने उसमें सक्रिय ढ़ंग से भाग लिया।

कई पूर्वजों से आपको प्रेरणा मिली है। इनमें कौन प्रमुख हैं?

संस्कृत में व्यास, वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति, भृर्तहरि, जयदेव और मेल्पत्तूर प्रमुख हैं। अंग्रेजी कवियों में शेक्सपीयर, शैली, कीट्स, वर्डववर्थ, लांग फेलो, वाल्ट विटमैन, ऑस्कर वाइल्ड, इलियट मुझे पसन्द हैं। मलयालम में एषुत्तच्छन, कुमारनासन, वल्लत्तोल, उल्लूर,नालाप्पाट्टु आदि प्रमुख है। इटश्शेरी गोविन्दन नायर मेरे गुरु थे।

मलयालम साहित्य में पोन्नानी मंडल के साहित्यकारों की चर्चा होती है। आप भी इसमें शामिल हैं। इसके बारे में कुछ बताएँगे?

पोन्नानी मंडल के साहित्यकारों में कई कवि, कथाकार और समीक्षक शामिल हैं। महाकवि वल्लत्तोल यहाँ आकर रहे थे। नालाप्पाट्टु नारायण मेनन तथा बालामणि अम्मा भी इस साहित्यिक परिवार के सदस्य थे। एम.टी. वासुदेवन नायर इस परिवार की परवर्ती पीढ़ी के साहित्यकार हैं।

संस्कृत में आपको शिक्षा मिली थी। मलयालम में कविता लिखने के लिए यह शिक्षा आपको कितनी प्रेरक और उपयोगी लगी?

गुरुकुल शिक्षा, ऋग्वेद संहिता का पारायण व एषुत्तच्छन की रामायण का पारायण, इस बारे में तीन प्रमुख पड़ाव थे। यही मेरी कविता के स्रोत हैं। वेदाध्ययन से संस्कृत के सारे शब्द सुपरिचित हो गए। फिर गाँव के अक्षरश्लोक प्रेमियों का सम्पर्क भी मुझे प्रेरक लगा।

अंग्रेजी में भी आपने कुछ अनुवाद किये हैं। यह दक्षता कैसे मिली ?

इंटरमीडिएट क्लास के अंग्रेजी प्राध्यापक एम.पी. शिवदास मेनन ने मुझे अंग्रेजी में लिखने का साहस प्रदान किया था। बाद में स्वामी चिन्मयानन्दजी के गीता व्याख्यान भी सुने। 1956 में मुझे कालीकट आकाशवाणी में नियुक्ति मिली थी। वहाँ मैं स्क्रिप्ट राईटर था। तब मलयालम तथा संस्कृत की कुछ रचनाओं का अनुवाद अंग्रेजी में करना पड़ा था। व्याकरण नियमों पर अधिक बल न देकर अंग्रेजी में लिखने लगा था।

आप करुणा, अहिंसा और शान्ति पर बल देते हैं। खटमल को आग में डालकर मारने के बाद आए विचारों का आपने कहीं उल्लेख किया है। वह घटना क्या है?

बचपन में सुबह जागकर उठने पर कम्बल से खटमलों को पकड़कर लालटेन के ढक्कन पर डालता था। एक बार उसके शरीर फटने की आवाज सुनी तो मैं चौंक उठा। मैं उसको जीवन तो दे नहीं सकता, तब उसका जीवन लेना भी उचित नहीं है। यह विचार मेरे मन में आया। तब मैंने एक दृढ़निश्चय किया कि मैं भविष्य में हिंसा नहीं करूँगा। यही विचार अहिंसा-ममता के रूप में विकसित हुआ। सशस्त्र क्रान्ति से समाजवाद प्राप्त करने का तरीका मुझे मंजूर नहीं हुआ।

कविता के जन्म के बारे में आपका अनुभव क्या है? मानस से कागज तक की प्रक्रिया बताइए?

पुशारी रामन मेरी एक बाल कविता है। उसको उदाहरण बनाकर स्पष्ट करूँगा। इसमें बारह पंक्तियाँ हैं। सोते समय मैंने इसकी पंक्तियाँ गायीं। अन्तिम पंक्ति के हास्य के कारण मैं हँस पड़ा। यह पंक्ति थी- 'क्या काशी तेरी ससुराल है?' मैंने उठकर बत्ती जलायी। फिर सोच-सोचकर 12पंक्तियाँ लिखीं। तभी एक बात समझ में आयी। मैं नहीं लिखता। मेरे अन्दर से कोई दूसरा लिखता है। मैं बता नहीं पाऊँगा कि वह आदमी कब जाग उठता है। उसके जागने पर ही सफलता मिलती है। काव्य-रचना की कठिनाई वह संभाल लेता है। अपने लिए अज्ञात बातें भी मैं लिख जाता हूँ। अन्तर्दृष्टि खुलने जैसा अनुभव होता है। यह काव्य-रचना के पहले या बाद में या बीच में होता है।

'बीसवीं सदी का इतिहास' आपका एक प्रसिद्ध काव्य है। उस सदी का आधा भाग भी तब नहीं गुजरा था। आपने कहा था ''मेरे मन की प्रबुद्ध प्रेरणा पर प्रश्न डालते हुए अवचेतन में उमड़ आए शब्द इस कृति में हैं।''यह काव्य आशंकाओं की भट्टी है। अब वह जमाना इतिहास का हिस्सा है। आप उसके बाद की सदी में भी रचनारत हैं। उस काव्य पर अब आप क्या सोचते हैं?

वह कृति लिखते समय मेरे मन में जम गयी आशंकाएँ बाद में सच्चाई के रूप में बदल गयीं। 1917 से 1987 तक के सात दशकों में दुनिया ने क्या देखा? हिंसा के मार्गपर आगे बढ़कर मुक्ति पाने के परीक्षण में विश्व के कई राष्ट्र निमग्न हो गये। मजदूर ओर पूँजीपतियों के संघर्ष से वे राष्ट्र शान्ति की ओर लौट नहीं पाएँगे, ऐसा लगा। संयुक्त राष्ट्र संघ और यूनेस्को जैसे संगठन इसकी मिसाल हैं। हर सामाजिक क्रान्ति से एक आध्यात्मिक स्तर भी जुड़ जाना चाहिए तभी क्रान्तिकारियों में एक समर्पण भावना आएगी। यही मेरी मान्यता है। Matter is the derivative of consciousness इस सोच ने विज्ञान के विश्वास को बदल डाला है।

ऋषित्व और कवित्व के बीच के सम्पर्क पर आप क्या सोचते हैं?

असल में अद्वैत और सौन्दर्यशास्त्र के बीच की एकस्वरता को 'ऋषित्व' कहते हैं। भारतीय सौन्दर्यशास्त्र और बिम्ब उपासना आनन्दवाद के रूप में इस बिन्दु पर मिल जाते हैं। ईश्वरीय बिम्ब, काव्य-बिम्ब के समान आनन्दात्मक है। यही सोच ऋषित्व है। कहीं-कहीं इसका अभाव होता है। अर्थ-बोध और छन्द-बोध के बिना आगे बढ़ती पत्रकारिता को साहित्य मानने की प्रवृति आज व्यापक बनती जा रही है। अरविन्द के अनुसार कविता मन्त्र बनेगी। सहृदयता का विकास होना।

हक्सली ने ''धीर नूतन संसार'' का विचार सामने रखा। आपके एक काव्य का शीर्षक चकनाचूर संसार है। क्या आपके मन में आज धीर नूतन संसार की आशा अंकुरित होती है?

क्या भविष्य आज के तमाम तमोगुण को मिटा सकेगा। यह प्रश्न मैं अपने आपसे भी पूछता हूँ।

एक आलोचक ने लिखा था, मिस्टर अक्कित्तम आप अपने विवेक को क्रान्ति भावना के ढ़ाँचे में क्यों नहीं ढालते?

चौथे दशक के अन्त में मेरी कविता में क्रान्ति भावना हावी हो उठी थी। बाद में मैं उस मार्ग से हट गया और वह आलोचक क्रान्ति के विचारों में फँस गया। प्रकृति में सब कुछ परिवर्तनशील है। यही मार्क्स का विचार था। भारतीय दर्शन कहता है कि काल ही अजेय गुरु है। बीसवीं सदी का इतिहास में मैंने क्रान्ति को विवेक के ढ़ाँचे में डाला है। तेल लगाना ठीक है, लेकिन सिर को भूलकर ऐसा करना अनुचित है। मनुष्य के दुःख को हल्का करने के लिए मनुष्य को केले के समान काटने का तरीका सही नहीं है।

'अश्रुकण का सौरमंडल' यह आपका अभिनव तथा मौलिक प्रयोग है। यह परदुःख के विवेक की ओर संकेत करता है। यह दिशा-संकेत आपको कैसे मिला था?

यह परदुःख विवेक मुझे पिताजी और उनके बड़े भाई से मिला था। काका के चार लड़के किशोरावस्था में मर गये थे। लड़का पैदा न होने पर कुल नहीं टिकेगा। यही उस समय का विश्वास था। वह सबसे बड़ा विघ्न था। दादाजी हमेशा रोते रहते थे। दो बार उन्होंने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। एक बार मन्त्रोच्चारण गलत हो गया। एक बसन्त में एक बार ही यज्ञ हो सकता था। जब काकाजी के पुत्र यूँ ही मर गये तब उन्होंने अपने छोटे भाई से विवाह करने को कहा।

'बलिदर्शन' को साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला था। इसमें आपने महाबलि की प्रस्तुति नये सिरे से की थी। कवि की कामना को पात्र यहाँ कहाँ तक मानता है?

मैंने अपनी भावना में जो चित्र देखा था उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति यहाँ नहीं हुई। दरभा (एक खास घास) शरीर पर पड़ने के कारण ज्यादा खून आँत में जम गया था। यह चित्र कविता में नहीं आया। इसका कारण बताऊँगा। पात्र कवि की इच्छा को नहीं मान रहा था। कृति की भूमिका में मैंने यह बात स्पष्ट की थी।

यह कथा चिर-पुरातन है लेकिन आपकी दृष्टि नयी है। पुनराख्यान का आधार क्या था?

महाबलि ने भूमि दान में दे दी थी। यह कहानी मैंने बचपन में ही सुनी थी। दान देने पर धोखा खाएगा, पुरोहित शुक्र ने यह उपदेश बलि को दिया था। धोखा खाने की स्थिति में भी वह अपना दायित्व निभाएगा, यह बलि का अपना निर्णय था। आगे के घटनाक्रम में शुक्र काना बन गया। शुक्र की एक आँख में खून जम गया, यह कथा मैंने सुनी थी। कविता में वह प्रसंग लाना मेरा ध्येय था, लेकिन लिखते समय मन में अन्य बातें आ गयीं।

आप परम्परा को मानते हैं। आधुनिक बनना भी चाहते हैं। क्या वे दोनों सहगामी बन सकते हैं?

कुएँ में पेड़ मेंढक से आप कहेंगे कि पानी बहता है तो मेंढक इस बात को नहीं मानेगा। नदी का पानी तो नीचे की ओर बहता ही है। यहाँ सारे पौधे पुराने हैं, किन्तु जिस मिट्टी में वे खड़े हैं उसकी

खाद से ही वे बड़े हो सकते हैं। अतीत, वर्तमान और भविष्य इनमें से किसी भी तत्त्व का निराकरण कर देने से काम नहीं चलेगा। इन सभी का सहयोग आवश्यक है। कवि तो विनय और विवेक का मार्ग अपनाता है।

आत्मदुःख और परदुःख दोनों आपके काव्य-विषय बने हैं। कवि मन को किस मुहूर्त में अधिक आनन्द मिलता है।

मेरी दृष्टि में आत्मदुःख और परदुःख की समस्या नहीं है। आत्मानुभव हो, परानुभव हो, अनुभव ही कवि का अभूतपूर्व दर्शन बनता है। यही कविता का बीज है। निमिष भर की वह रासायनिक प्रक्रिया रोशनी के रूप में बदल जाती है।

कविता बोध नहीं, अबोध है। यह प्रस्ताव स्पष्टीकरण माँगता है?

कविता ब्रह्म है। कविता को अबोध कहने के पीछे यही एक कारण है। वह अबोध सत्य और सबोध सत्य के पीछे का संघर्ष है। उसकी प्रेरणा ब्रह्म से आती है। शान्ति और संघर्ष से प्रेरणा मिल सकती है। निराकरण ब्रह्म के हाथ में है।

कहते हैं कि भारतीय दर्शन मूलतः आशावादी है, फिर भी इधर के काव्य में दुःख का महत्त्व प्रतिपादित होता है। ऐसा क्यों?

आधुनिक सभ्यता की कमजोरी यह है कि मनुष्य केवल दो आँखों के बारे में सजग है। ललाट की आँख से भी उसे सजग होना होगा। उसको खोलने के लिए हम भस्म, सिन्दूर और चन्दन लगाते हैं। वह आँख भी खुले तभी मनुष्य अतिमानुष बनेगा। अरविन्द ने इसी स्थिति की चर्चा की थी। सामाजिक विकास के पीछे संगीत की श्रुति के समान प्रकृति की इच्छा भी गतिशील होती है। चौदह मन्वंतर तक भारत की कालगणना व्याप्त है। आज के समाज में मनुष्य अधिक स्वार्थी बनता जा रहा है। यह स्थिति मुझे परेशान करती है। इस अविनय को देखकर मैं रोता हूँ। भले इस दुःख के कारण मैं एक संन्यासी नहीं बन सकता। यह स्वार्थ आगामी पीढ़ी के मनुष्यों को अधिक स्वार्थ में धकेल देगा, यही मेरे दुःख का कारण है। सर्वातर्न्यामी भगवान् हर संकट को दूर करने का मार्ग दिखाएगा ऐसा सोचकर मैं सिर झुकाता हूँ। पुनः मनःशान्ति प्राप्त करने की चेष्टा करता हूँ।

जीवन सत्यों के प्रतिपादन के लिए आप प्रकृति-सत्यों का सहारा लेते हैं। प्रकृति को खतरे से बचाने के लिए आज साहित्यकार और वैज्ञानिक एक साथ प्रयत्नरत हैं। आपकी प्रकृति दृष्टि क्या है?

प्रकृति की आँख के रूप में मनुष्य को देखना है। प्रकृति संरक्षण के पीछे यही एक उद्देश्य है। प्रकृति-बोध ने मुझे तथा हमारी पीढ़ी को विनम्र बनाया था। आज कम्यूनिज्म के अनुयायी ह्यूमनिज्म की ओर उन्मुख हो रहे हैं। प्रकृति संरक्षण का बोध उनमें भी प्रबल रहा है। उसके फलस्वरूप मन में दया उभरेगी। यह दया-दृष्टि वेद-इतिहास ग्रन्थों से मुझे मिली है। 'नमः पृथिव्यैः नमः औषधिभ्यः' वाला मन्त्र इसी की ओर इंगित करता है। ब्रह्म, अग्नि, पृथ्वी, औषधि, शब्द वाचस्पति तथा विष्णु के प्रति वहाँ आदर प्रकट किया गया है।

आपकी काव्य-भाषा विशिष्ट है। इसके बारे में आपका कोई विशेष दृष्टिकोण है?

भाषा एक कृत्रिम वस्तु है। संगीत के स्वर और चित्र के वर्ण के समान भाषा प्राकृतिक नहीं है। यह बात शुरू में ही मेरी समझ में आ गयी थी। बात श्रोता की समझ में अवश्य आनी चाहिए। घटाना-बढ़ाना ठीक नहीं। समान मानसिक परिपक्वता होगी तभी कवि की बात को श्रोता समझेगा। वक्ता के मन की बातें श्रोता को प्रदान करने वाला उपकरण प्राप्त करना भी जरूरी है। व्याकरणादि के नियमों का ख्याल करके ही, औचित्य के अनुरूप, नियम का उल्लंघन किया जाना चाहिए, तभी भाषा का विकास सम्भव होगा। मेरे ख्याल से सारी जीवन्त भाषाओं की यही समस्या है। प्रतिपल मनुष्य का विकास होता है Expanding Universe के समान पिंड ब्रह्माण्ड का ही रूप है।

कवि इडश्शेरी के शिष्य के रूप में आपने बचपन में कविता के क्षेत्र में कदम रखा। उस युग की प्रवृत्तियाँ अलग थीं। आज आधुनिकोत्तर तथा उत्तर आधुनिकता के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं। परिवर्तनों के युग में भी अपने स्थान पर अडिग रहने का आत्मसन्तोष क्या आपको आज मिल रहा है?

जी हाँ, मैं संतुष्ट हूँ। अगर इउश्शेरी के सम्पर्क में मैं न आता तो मैं कुछ भी प्राप्त न कर पाता, यह सोच आज भी मेरे मन में प्रबल है। उनके आशीर्वाद को मैं एक ज्योति की तरह आज भी मन में प्रज्ज्वलित करता हूँ। आधुनिकता कितनी भी मात्रा में आ जाए, वह गौण है। कवि के मन में एक अन्तदर्शन पैदा होना ही मुख्य बात है। मेरी राय में वही टिकाऊ है। एक अनुभूति आएगी, वह कविता बनेगी, इस तरह का अहंकार मेरे मन में नहीं है। इसलिए आज भी मैं एक कोने में स्वतन्त्र होकर बैठा हूँ।

साकेत पो.चेलम्बरा जिला-मलाप्पुरम
केरल, पिन-673634, मो.9847762021
ई-मेल : arsusaketh@yahoo.com

(महाकवि अक्कितम से संबंधित सामग्री डॉ.आरसु तथा श्री नारायण (अक्कितम जी के सुपुत्र) के सौजन्य से)

संजीव कौशल की कविताएँ

"कई बार हताशा और विसंगतियों से भरा पर्यावरण व्यक्ति को एक खिलंदड़ेपन से भर देता है। वह हर परिदृश्य को एक कटाक्ष, एक तंज की तरह देखने लगता है। यदि वह व्यक्ति कवि/कलाकार है तो फिर यह खिलंदड़ापन अपने भीतर उतनी ही उलट प्रकृति का आशय छुपाए होता है। इसे हल्के में नहीं लिया जा सकता। युवा कवि संजीव कौशल की अनेक कविताएँ इसी तंज या 'विट' की तरह उभरती हैं। कोई आपका देश लेकर भाग गया हो और आपको पता ही न चले। एक बेखबरी पर यह कितना बड़ा कटाक्ष है (कल तुम सुनोगे)। ऐसे दौर में 'गणपति बप्पा मोरिया' का शोर सुनकर कवि भी गणेश जी के साथ परेशान हो उठता है (गणेश जी का दर्द)। किसी भी शुभ आरम्भ के लिए जिम्मेदार देवता जब अनहोनी के दोषारोपण के नीचे दब जाए तो फिर 'भगवान के काम' से पिण्ड छुड़ाने के अलावा चारा ही क्या है! यह केवल तंज नहीं एक देवता का मार्मिक मानवीकरण है। धर्म के बारे में वह तंज से हटकर एक संजीदा बात 'कैद' कविता में करते हैं–'जो जेल से बाहर हैं/ खुद को आजाद समझते हैं/ धर्म की धुंध में सलाखें दिखाई नहीं देतीं'। ये वो धुंध है जिसकी आड़ में अजन्में बच्चों, स्त्रियों यहाँ तक कि न्याय, कानून, संविधान की हत्या कर दी जाती है। संजीव धर्म के नाम पर छाए पागलपन के इस कुहासे को रेखांकित करते हैं। 'फासला' कविता में सूक्तियों के विलोम को भेदते हुए कवि उस पाखण्ड को बेनकाब करता है जो रूढ़ियों को परम्परा का चोला पहनाकर बहुसंख्य जन को भ्रमित करता है। यह प्रहार दरअसल उन अमानवीय प्रवृत्तियों पर है जो भावनाओं का व्यापार अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए करती हैं। 'ब्रश स्टैण्ड' जैसी छोटी मगर मार्मिक कविता में कवि दैनंदिन की निर्जीव और अलक्षित चीजों को एक साथ प्रेम, साहचर्य और अकेलेपन के प्रतीक में तब्दील कर देता है। 'एक दूसरे को सहारा' और साँसों की ताजगी' किस खामोशी से दो जीवित इकाईयों से दो निर्जीव दूथ ब्रशों में स्थानांतरित कर दी जाती हैं! जाहिर है अंततः यर भी ब्रश स्टैण्ड से विस्थापित होगा। 'हुनर' भी एक छोटी और अर्थवान कविता है। यहाँ जूड़ा बाँधने की कला को स्त्री के प्रेम, सदाशयता, औदार्य, साहचर्य, त्याग, धैर्य और सहभागिता जैसे प्राकृतिक और सहज कारकों के रूप में देखा गया है। 'बँधे भी खुले भी' जैसी पंक्ति 'बंधन' शब्द को कविता में नई अर्थवत्ता से भर देती है। 'हाल-चाल' कविता ऐसी मार्मिक प्रेम कविता है जिसमें प्रेयसी ही नदारद है। क्या किसी कड़वे नीम के पेड़ में प्रेयसी का अंश समा सकता है' उत्तर है-जी हाँ संजीव की इस कविता में वह संभव हुआ है। प्रेम केवल दैहिक रूमानियत नहीं वह प्रेयसी के आँगन में खड़े पेड़ से एक जीवंत संवाद भी है क्योंकि अहाता तो प्रेयसी का ही है। 'एड हॉक' कविता एक मार्मिक दृश्य बंध ही नहीं हमारी वर्तमान सेवा प्रणाली पर भी एक गम्भीर प्रश्नचिन्ह है। उच्च शिक्षित अर्द्धबेरोजगार लोग हर पल किस भयावह अनिश्चितता, संशय और असुरक्षा के अँधेरे में जी रहे हैं, यह कविता उसका सच्चा बयान है। जब अस्थायी नौकरी पर भी संशय की खौफनाक तलवार लटकी रहे तो कार्य संस्कृति में आत्मविश्वास, आत्म गौरव, सुरक्षा और निष्ठा कैसे विकसित होगी? 'जयकारा' कविता में भी वहीं कवि-कटाक्ष उभरा है जिसका जिक्र आरम्भ में किया। जब सत्ता और राजनीति मनुष्यों के बजाए किसी पशु (वह भी अबोध) के इर्द-गिर्द सिमट जाए तो फिर किसका वजूद बचेगा– क्या मनुष्य का, क्या लोकतंत्र का ? 'आई कान्ट ब्रीद' अमेरिका की हालिया दर्दनाक यटना पर एकाग्र है। साम्प्रदायिकता, अलगाव और रंगभेद से दुनिया का शायद ही कोई हिस्सा अछूता बचा हो। सत्ता मद और कथित श्रेष्ठ रक्त के दंभ ने मानवीयता की सभी सीमाएँ लाँघ ली हैं–'वह सत्ता का घुटना था/ दम घोंटने की/ उसकी आदत बहुत पुरानी थीं।' इन तमाम अमानवीय क्रिया-कलापों को कथित श्रेष्ठता भाव पालने वालों का रूटीन कार्य बताना ही इस कविता की ताकत है। 'मजदूर' कविता तमाम श्रमशील लोगों के पक्ष में खड़ी एक आवाज है। अपनी पहचान तक को अपने श्रम के माध्यम से विलीन कर देना किसी हाड़तोड़, पसीना बहाते श्रमिक द्वारा ही संभव है। यह कविता मजदूरों और मजदूरी के चरित्र को बयान करती है। यह उनके पसीने की गंध में सराबोर एक मार्मिक गीत है। 'दीवारें' कविता विच्छेदन और अलगाव की प्रवृत्तियों पर तीखा प्रहार है। ईट यूँ निर्माण का प्रतीक है लेकिन जब वह विभाजन करने वाली दीवार का प्रमुख हिस्सा बन जाए तो उसकी सर्जनात्मकता संदेहास्पद हो जाती है। 'मैं हिन्दी हूँ' एक अनूठी प्रेम कविता है जिसमें अपनी भाषा के प्रति प्रेम भी गुंथा हुआ है। प्रेम की सहज अभिव्यक्ति अपनी मातृभाषा में ही संभव है। जैसा कि पहले भी कहा संजीव कौशल निर्जीव चीजों से जीवन-स्पंदन उत्पन्न करने में माहिर कलाकार हैं। 'कप' कविता भी इसी कौशल का अगला उदाहरण है। दो कपों की अदला-बदली कविता में किस तरह से दो व्यक्तित्वों की अदला-बदली हो जाती है! 'मुर्गा बांग देता है' एक अलग तरह की कविता है जिसमें किसी नियति की खूबसूरत अभिव्यक्ति काव्य पंक्तियों के क्रम-व्यतिक्रम के माध्यम से की गई है। सिन्टेक्स की यह काव्य-क्रीड़ा मुर्गे का जोश और उसकी नियति को हौले-से कविता में उतारती है। 'मिर्चें' अपेक्षाकृत लम्बी कविता है जिसमें कवि ने अनूठे मेटाफर रचे हैं–'जीवन के सवालों में उलझीं/ जूझती रहती हैं वे समाज के बेस्वाद जवाबों से।' यहाँ मिर्च एक वस्तु मात्र न होकर जीवन और रिश्तों के विभिन्न आयामों तक पहुँचती है। वह स्त्रियों के दर्द में भी है और बेगम अख्तर की आवाज में भी। 'पिस कर भी अपना सत्व नहीं खोतीं मिर्चें' जैसी पंक्ति के माध्यम से वे प्रकृति के शाश्वत रस और गुणधर्म को रेखांकित करते हैं। संजीव कौशल एक प्रतिभाशाली युवा कवि हैं जिनके खिलंदड़ेपन को कविता में बहुत गंभीरता से भेदना होगा। निर्जीव काव्य उपादानों में जीवन का स्पंदन और साँसें भर देना ही संजीव का कौशल है।"

निरंजन श्रोत्रिय
9827007736